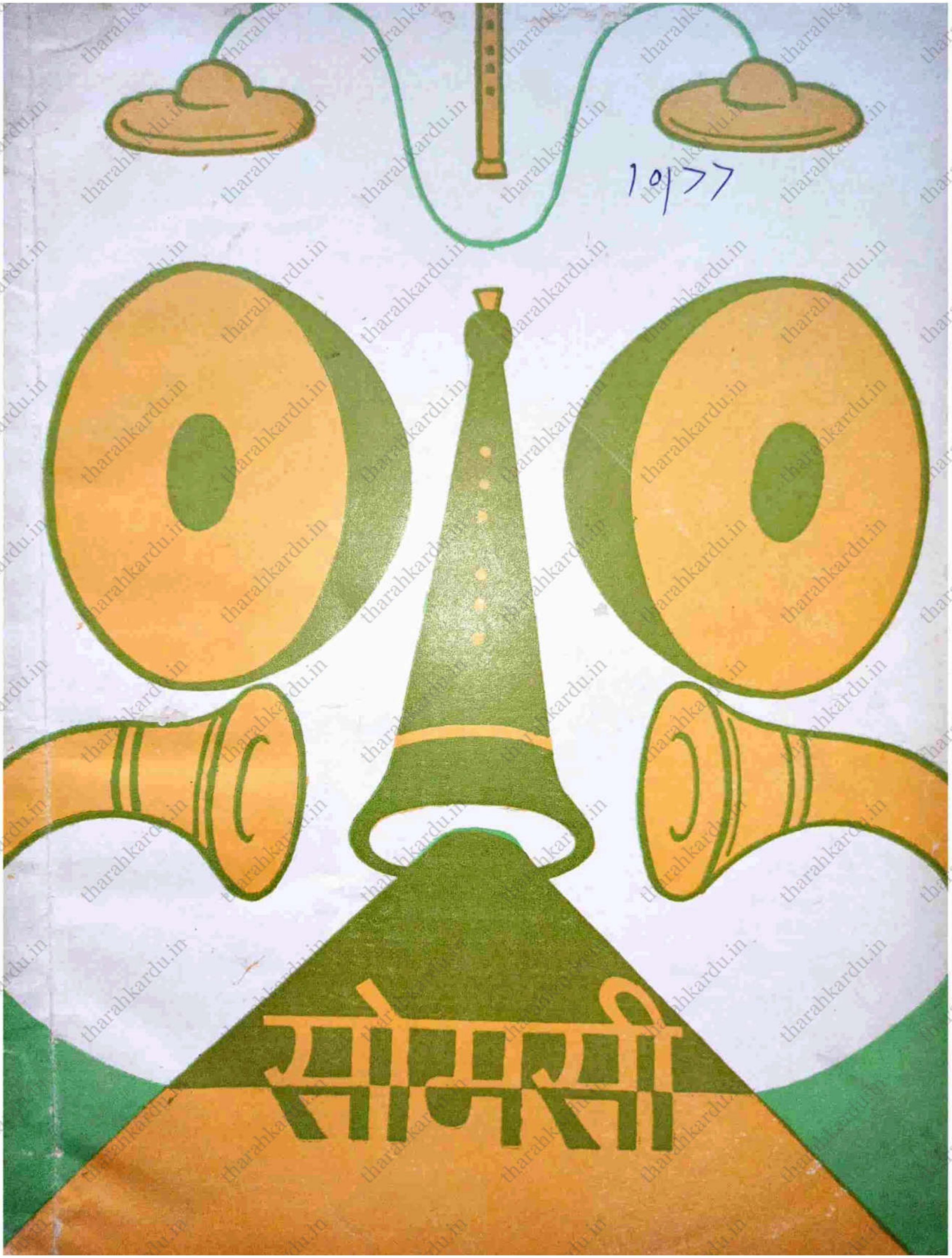
10/77
सोमसी

सोमसी

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी का
त्रैमासिक मुख-पत्र

वर्ष 3 अक्तूबर, 1977 अंक 4

प्रबन्ध-सम्पादक
एच० सी० पराशर

सम्पादक
डा० बंशी राम शर्मा

परामर्श-मण्डल
1. आचार्य दिवाकर दत्त शर्मा
2. श्री खेम राज गुप्त
3. श्री हरि राम जसटा
4. श्री मौलू राम ठाकुर

सहयोगी
सरोज शर्मा

मुखपृष्ठ
ओमप्रकाश

लोकोक्ति विशेषांक

प्रकाशन स्थानः
हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परीमहल, शिमला १७१००६

पूर्णांक–12 वर्ष 3 अंक 4

सोमसी

लोकोक्ति विशेषांक

वर्ष 3 अंक 4

पूर्णांक—12

जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्तूबर में प्रकाश्य।

लेखक के विचारों तथा दिए गए तथ्यों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं।

प्रकाशित रचनाओं को पूर्ण अथवा आंशिक रूप में उद्धृत करने के लिए सचिव, हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परी महल, शिमला-9 की अनुमति अनिवार्य है।

वार्षिक चंदा–१२ रु०

एक प्रति–३ रु०

विषयानुक्रमणिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
1. लोकोक्ति का साहित्यिक महत्व	—हरिचन्द पराशर	1
2. हिमाचल में समयवाचक ग्लाण–खुआणे	—डा0 श्याम लाल	5
3. चम्बा क्षेत्र की लोकोक्तियां तथा मुहावरे	—हरि प्रसाद सुमन	13
4. ऊना क्षेत्र में प्रचलित मुहावरे तथा लोकोक्तियां	—खुशी राम शर्मा	19
5. कांगड़ी लोकोक्तियां तथा मुहावरे	—दुर्गा दत्त शास्त्री	23
6. कांगड़ी लोकोक्तियां	—ओंकार लाल भारद्वाज	26
7. कांगड़ा क्षेत्र—लोकोक्तियां तथा पहेलियां	—सुदर्शन डोगरा	36
8. हमीरपुर की लोकोक्तियां तथा मुहावरे	—डा0 आत्मा राम	43
9. कहलूर जनपद के मुहावरे	—सरोज शर्मा	49
10. मण्डयाली लोकोक्तियां	—डा. कांशीराम आत्रेय	57
11. कुल्लू जनपद में लोकोक्तियों का प्रयोग	—विद्या शर्मा	62
12. कुल्लुई लोकोक्तियां	—बाल कृष्ण	69
13. शिमला क्षेत्र की लोकोक्तियां	—हरि राम जसटा	73
14. क्योंथल जनपद की लोकोक्तियां	—उमा शर्मा	79
15. सिरमौर क्षेत्र की लोकोक्तियां	—रामदयाल 'नीरज'	86
16. सोलन क्षेत्र : संस्मरण के गर्भ में पहेलियां	—नरेन्द्र अरुण	81
17. लाहुल की लोकोक्तियां : प्रयोग एवं प्रसंग	—के. अंगरूप लाहुली	88
18. किन्नर क्षेत्र की लोकोक्तियां	—डा. बंशी राम शर्मा	100
19. यशपाल—स्मृति कैसे स्थायी हो ?	—डा0 प्रभाकर माचवे	102
20. यशपाल की कहानियों में जीवन शैली की कुछ झलकियां	—देवकला	104
21. Systematics of Himachali Linguistics	Dr. Siddheshwar Varma	106
22. अकादमी की योजनाएं	—डा. गौतम शर्मा व्यथित	107
23. पुस्तक समीक्षा	—कृष्ण चन्द्र शर्मा	108
24. सारसंक्षेप विचारावली		111

सम्पादकीय

लोक व्यवहार की कसौटी पर परख कर प्राप्त किए गए माणिक्यों को, जिनमें कथातत्व की अपेक्षा संस्कृति के विविध पक्षों का स्वतन्त्र एवम् अनुभवपरक ज्ञान 'गागर में सागर' की भांति संचित रहता है, 'लोकोक्ति' अर्थात् 'लोगों' अथवा लोक की उक्ति कहा जाता है। लोकोक्ति-साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि इसकी शैली न तो कथात्मक है और न ही लयात्मक। लोकोक्ति साहित्य के अन्तर्गत हम मुख्यतः तीन विधाओं का अध्ययन करते हैं—(i) कहावतें, (ii) मुहावरे तथा (iii) प्रहेलिकाएं।

कहावतें तथा मुहावरे समाज के ज्ञान-कोष का कार्य करते हैं। किसी मान्यता पर प्रामाणिकता तथा सामाजिक स्वीकृति की मोहर मुहावरे के माध्यम से ही लग सकती है। कहावतों के द्वारा पोषण, शिक्षण, आलोचना तथा सूचना पद्धतियों से सामाजिक संतुलन का अध्ययन किया जा सकता है। कहावतों में प्रतीकों के द्वारा भी बात की जाती है।

लोकोक्ति में कथन की संक्षिप्ता, वक्रता तथा तीव्रता आवश्यक है। इसके साथ ही इसकी धूमकेतु की तरह एक दुम होती है जो इसका संक्षिप्त इतिहास लिए होती है। लोकोक्ति का प्रयोग करने वाला व्यक्ति इस पूंछ का प्रयोग उदाहरण दर्शाने के लिए करता है।

कहावतों में सूत्र शैली का प्रयोग होता है। भावतत्वों के संयोजन तथा निबन्धन में कहावतों का महत्वपूर्ण स्थान है। कहने सुनने में छोटा किन्तु सारगर्भित तथा करारी चोट करने वाला वाक्य कहावत कहलाता है। ये भी सामाजिक ज्ञान के संचित कोश हैं।

प्रहेलिकाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रसिद्ध नृतत्व शास्त्री फ्रेज़र का मत है कि इनका उदय उस समय हुआ होगा जब किन्हीं कारणों से वक्ता को अपनी बात स्पष्ट कहने में अड़चन आती होगी। यह बात किसी सीमा तक ठीक हो सकती है परन्तु वास्तव में पहेलियां 'व्यक्तिकृत्य किमप्यर्थं स्वरूपार्थस्य गोपनात्— अर्थात् वस्तु के स्वरूप के गोपन द्वारा किसी भिन्न अर्थ के द्योतन हेतु लोकमानस के बुद्धि–चातुर्य को निखारने की दृष्टि से आरम्भ हुई होंगी। पहेलियों में गोपनीयता होने के कारण कूटशैली का प्रयोग अधिक होता है। श्लिष्ट और कूट शैली की पहेलियां 'शाब्दी' तथा अर्थद्योतन की प्रक्रिया को स्पष्टतः बताने वाली पहेलियां 'आर्थी' कही गई हैं। काव्यशास्त्र में पहेलियों को स्वतन्त्र अलंकार माना गया है और प्राचीन काल के ऐसे कितने ही अवदान उपलब्ध होते हैं जिनमें पहेलियों में परास्त हो जाने पर नायकों को राजपाट छोड़ देना पड़ा तथा कई पण्डितों को देश निकाला हो गया।

प्रस्तुत विशेषांक में यत्र-तत्र प्रचलित लोकोक्ति साहित्य के उक्त अंगों को एकत्रित करके सुरक्षित रखने का उद्देश्य रहा है। क्रमबद्ध रूप से अथवा समग्र मुक्तक साहित्य को एकत्र करने की ओर ध्यान नहीं दिया गया है क्योंकि इस अंक में सम्मिलित सामग्री हमारे विशाल लोकोक्ति साहित्य का एक अंश मात्र है। फिर भी सहज ही यह कहा जा सकता है कि इस विशेषांक में संकलित सामग्री का समाज-शास्त्रीय दृष्टि से अध्ययन करने पर विज्ञ पाठक इस प्रदेश के 'लोकमानस' को समझ सकता है। लोक-व्यवहार की जो मणियां यहां संगृहीत हैं, शायद ही इस से पूर्व किसी एक अंक अथवा पुस्तक में इतनी विविधता से पाठक को प्राप्त हुई हों।

प्रस्तुत विशेषांक दिशादर्शन मात्र के लिए ही प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है भविष्य में इस दिशा में और अधिक सामग्री प्रकाश में आएगी।

—बंशी राम शर्मा

लोकोक्ति का साहित्यिक महत्व

—हरिचन्द्र पराशर

वाणी के स्तर पर सर्जनशील व्यक्ति के लिये यह संसार न तो केवल वस्तु मात्र है और न ही केवल प्रयोजन मात्र। इस नाम-रूपात्मक जगत को वाणीकार एक अलग दृष्टि से देखता है। वह अनुभव करता है कि सभी प्राकृतिक आकार और रूप सप्राण हैं, उन सभी में जीवन-हिलोर सन्निविष्ट है। सभी प्राकृतिक आकारों में से मानवीय शरीर ही एक ऐसा माध्यम है जहां हर समय एक रूपान्तरण होता रहता है। सर्वाधिक रूपान्तरण अहं का होता है। अहं वस्तुतः मानसिक भौतिक तथ्य है। वह सुसुप्त और अपुनरुज्जीवित अवस्था में रहकर पुनरुद्धार-वंचित रहता है, वह सदैव रूपान्तरण के लिये सचेष्ट रहता है। वाणी के स्तर पर सर्वोत्तम रूपान्तरण कविता में सम्भव है। इसका द्वितीय स्तरीय रूपान्तरण चमत्कारपूर्ण उक्ति अथवा बिम्बग्राही उक्ति में सम्भव होता है। रसोक्ति, सूक्ति, बिम्बग्राही उक्ति मिल कर लोकोक्ति के संग्रह का सम्भरण करती हैं।

अहं पर बाह्य जगत के रूपान्तर अपना जमाव टिकाव पाते हैं। ऐसी विशेष अवस्था में जब अहं वाणी-रूप स्वयं का अनुवाद करता है, तब उक्ति बनती है। उस उक्ति में यदि काव्य-शिल्प का प्राधान्य है तो वह रसोक्ति होगी और यदि जीवन-जगत के तथ्य-सत्य का कथन प्रमुख है तो लोकोक्ति होगी। लोकोक्ति में अपुनरुज्जीवित अहं का अनुवाद है तभी तो लोकोक्ति को साहित्य का अंग माना जाता है। लोग मिल कर लोकोक्ति नहीं बनाते, प्रत्युत एक पुनरुद्धारशील अहं कुछ कठोर तथ्यों को बिम्ब-भाषा में रूपान्तरित करता है। वह उक्ति अपनी अन्तर्निहित शक्ति के कारण लोकोक्ति बन जाती है, अर्थात् लोक में प्रचलित हो जाती है। किताबी ज्ञान पर जीने वाला समाज बिम्ब-भाषा का प्रयोग बहुत कम करता है क्योंकि वह अधिकतर विचार-प्रेषण में व्यस्त रहता है। इस के विपरीत अनुभवाश्रित समाज बिम्बभाषा का प्रयोग अधिक करता है क्योंकि उसका सम्बन्ध प्रकृति और उसकी अनुकृति के साथ प्रत्यक्ष रहता है। जीवन की मनौतियां और मान्यताएं, सफलताएं और विफलताएं, विजय और पराजय से उत्पन्न सभी सुख-दुखों की अभिव्यक्ति अनुभवाश्रित समाज का मानव सहज भाव से करता है। सहज भाव का अभिप्राय है कि जो प्रकृति उसके परिवेश में है, उसी की वस्तुओं का उपकरण बनाकर वह उक्ति करता है। किसी समाज के परिवेश में प्रकृति के आकार-प्रकार जिस तरह के होंगे उसकी लोकोक्तियों में वही आकार-प्रकार अभिव्यक्ति पाएंगे। यदि वे विभिन्न हैं, तो लोकोक्तियां भी विविध होंगी।

हिमाचल प्रदेश के समाज में अभी तक अनेक प्रकार की विविधताएं हैं, उन की उपजी लोकोक्तियां विविध और विभिन्न हैं। उन का संकलन और अध्ययन यहां के जन और जगत के आपसी रूपान्तरणों के कई कोणों को प्रकाशित करेगा। जनता और साहित्य दोनों का उपेक्षित परन्तु उपयोगी अंग 'लोकोक्ति' चिन्तकों के अध्ययन, मनन की बाट जोह रहा है, लोकोक्ति वास्तव में लोक विज्ञान का एक अंग है। लोक-प्रवृत्ति, लोक-शैली, लोकोक्ति ये सभी लोकमानस की उपज है। इन सभी का माध्यम लोकभाषा है। लोक भाषा की रीढ़ लोकोक्ति है।

लोकगीत और लोककथा तो लोकमानस के चित्रों की अभिव्यक्ति होते हैं परन्तु लोकोक्ति में कुछ बौद्धिक भाव आ जुड़ता है। व्यवसाय और व्यवहार के क्षेत्रों में कामकाज में जुटा मानव दूसरों की तथा अपनी समझ का संकलन करता है। जिस मानव में वाणी की चतुरता, ध्वनिशक्ति की सम्पन्नता और समास उपसंहार करने की प्रतिभा हो और फिर यदि वह किसी दृश्य की सार्वत्रिकता समझ लें, ऐसी स्थिति में उसकी उक्ति लोकोक्ति बनने की सामर्थ्य रखती है। समूह के ज्ञान को एक की चतुरता शब्द रूप में बदल कर लोकोक्ति बना देती है।

लोकोक्ति, सूक्ति और मुहावरे इन में बहुत बारीक सा अन्तर है। ये तीनों ही मानव स्वभाव का दर्पण हैं। नृशास्त्र की कुछ पुरानी बातों का इनके माध्यम से पता लगता है। जन समूह ही व्यवहारपटुता का आंशिक ज्ञान उस समूह की लोकोक्तियों से होता है। जिस जनसमूह में लोकोक्तियां प्रचलित न हों, वह जनसमूह अपने पूर्वजों के ज्ञान और अनुभव से कुछ सीमा तक वंचित रहता है। व्यवहार-ज्ञान लोकोक्तियों में सूत्रबद्ध रहता है, काम काज के समय कई बार हमारा पथ प्रदर्शन करता है। जब जब किसी प्रदेश के 'लोक' ने जागृत होकर स्वयं को पहचानना चाहा, उसने लोकभाषा का आश्रय लिया, लोकभाषा में कविता करने के लिये लोकोक्ति की सहायता अनिवार्य है। हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों ने लोकोक्तियों का अपने काव्य में प्रचुर प्रयोग किया है। मध्यकालीन भक्त कवियों के कुछेक उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

1. लिखत सुधाकर गा लिखि राहू,
   बिधि गति बाम सदा सब काहू।
2. रेख खंचाई कहउं बलुभाषी,
   भामिनि भइहु दूध कई माखी।
3. जारे जोग सुभाउ हमारा,
   अनख देखि ना जाई तुम्हारा।
4. का बरखा जब कृषि सुखाने,
   समय चुके पुनि का पछताने।
5. टूटे सजन मनाइए जो टूटे सौ बार,
   रहिमन फिरि फिरि पोइए, टूटे मुक्ताहार।
6. दीन सबन को लखत है, दीन हि लखै न कोय। इत्यादि।

उन्नीसवीं शती का भारत सांस्कृतिक पुनरुत्थान का भारत था। उसी सांस्कृतिक अन्दोलन ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्यिक आंदोलन की सृष्टि की और ये दोनों सन् 1885 के पश्चात् धीरे धीरे स्वतन्त्रता संग्राम में रूपान्तरित हुए। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का साहित्यिक आन्दोलन लोकभाषा, लोक-प्रवृत्ति, लोक-शैली, लोक-गीत आदि को लेकर चला था। लोक हितार्थ लिखित उस साहित्य में लोकोक्यिों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है। जिन लोकोक्तियों का उस साहित्य में अधिकतर प्रयोग हुआ है, उनका उल्लेख हम करते है :—

1. अधजल गगरी छलकत जाय।
2. अपना उल्लू कहीं न जाय।
3. अपना पेट गदहु भरि लेत।
4. खरी मजूरी चोखा काम।
5. घर की खांड खुरखुरी, लागे चोरी का गुड़ मीठा।

6. कूप ही में जहां भांग परी है।
7. जैसे कन्ता घर रहें तैहे रहे विदेस।
8. जो गुड़ खाय, सो कान छिदाय।
9. जिसका ब्याहश्र उसी के गीत।
10. जिन ढूंढा, तिन पाया गहरे पानी पैठ।
11. मेरी बिल्ली, मुझ से म्याऊं।
12. लरिकान की खेल, चिरीन की मौत।
13. हिजड़ों के कब लड़का हुआ,
14. सोना धूल मां भी चमकै है।

नई कविता में भाषा क्रान्ति पुनः घटित हुई। अभिजात्यवर्ग की भाषा के स्थान पर नई कविता में लोक-वर्ग की भाषा का बोलबाला होने लगा। नई कविता लोक भाषा की उत्थानिका बन कर उभरी, लोक-भाषा की रीढ़ लोकोक्ति का प्रयोग इसमें भी प्रचुर मात्रा में होने लगा है।

मानवीय जिजीविषा सत्य है कि भय से निद्रा भाग जाती है और भूख से सैक्स। इस सत्य को लोक कविता में प्रयुक्त एक लघु लोकोक्ति में व्यक्त किया गया है :—

"महंगी के मारे विरहा बिसरिया"

परन्तु नई कविता बौद्धिक आयाम की व्याख्या है, इस लिए लोकोक्ति की अपेक्षा उसमें व्यंग्य का प्राधान्य है। विसंगतियों का मजाक उड़ा कर वर्तमान समाज को सावधान करना इसका उद्देश्य है। तुलसी, रहीम और भारतेन्दु का उद्देश्य भोली जनता में मार्गदर्शन के लिए सूत्रबद्ध एकत्रित समझ का वितरण करना था, इसलिए उनके यहां लोकोक्ति-प्रयोग अधिक हैं। लोकोक्ति और लोक भाषा दोनों परम्पराओं का वाक् स्तरीय रूप हैं। परम्परा और इतिहास में एक स्पष्ट अन्तर है। इतिहास में भूतकाल के तथ्य का उतना भाग ही वर्णित रहता है, जितना कि द्रष्टा की समझ में भी पाया जाता है। यही कारण है कि इतिहास में सदैव भूत काल की भाषा में लिखा जाता है। इस के विपरीत परम्परा न भूत है न भविष्यत, वह सदैव वर्तमान है। वह एक निरन्तर प्रवाह है। प्रवाह से निकली तलछट की परम्परा समझ बैठना भूल है। उषा की तरह यह पौराणिक युवती है जो प्रत्येक सूर्योदय के साथ नवीन प्रतीत होती है। परम्परा के गर्भ में एक ऐसा रहस्य है जो सभी को अपनी अपनी परिधि में संयोजित करने का सामर्थ्य रखता है। परम्परा ही मानव को अपने पूर्वजों के प्रति कृतज्ञ बनाए रखती है। राम और कृष्ण के रूपों को परम्परा ने ही संवारा और सजाया है। संस्कृत में इतिहास अर्थात् इति-ह-आस का अर्थ है 'ऐसा ही होता आया' है। इतिहास के इस आश्रय को परम्परा ही पूरा करती है। वाक् के स्तर पर परम्परा के प्रवाह को सर्वाधिक लोकोक्ति सम्भव बनाती है। यदि वाक् की सृष्टि को हम प्रवर्तिका और धारिका माने तो लोकोक्ति उसकी संचायिका है। वाक् की घनीभूत शक्ति को मन्त्र कहते हैं। मन्त्र की शक्ति के द्वारा देवता परिमित और सीमित होता है। मन्त्र से ही मानव का विरेचन होता है और मन्त्र ही आप्त देवता के साथ एकात्म होता है। जिस तरह मन्त्र को वाक् की घनीभूत शक्ति कहा गया है, उसी प्रकार लोकोक्ति भाषा का गहन और सघन प्रयोग है। वैदिक चिन्तन में देवता मनुष्य की भीतरी सम्भावना और शक्ति का प्रतीक था। मनुष्य में प्रसुप्त देवत्व को जगाने के लिए यज्ञ का विधान है। बाल्मीकि और व्यास ने राम और कृष्ण को ऐतिहासिक पुरुषों के रूप में चित्रित नहीं किया था, उन्हें भावपुरुषों के रूप में रूपायित किया था। लोकोक्ति में अभिव्यक्त सत्य भाव-रूप होता है इतिहास-रूप नहीं। जब मनुष्य का अस्तित्व समग्र अस्तित्व

बहौंग्रा दी रात जाणी—इसका ग्रभिप्राय पर्व की रात से है। किसी सम्बन्धी या मित्र को रात भर रुकने के लिए निवेदन किया जाता है :—

'ग्रज कणी रात बहौंग्रा दी रात नी जाणी,'
ग्राज की रात पर्व (पर्व विशेष) की रात नहीं व्यतीत होगी।

३ महीन्ना

महीनों का वर्णन इस प्रकार है :—

न सौण सुक्के न भाद्द हरे।

न तो श्रावण मास में सूखे ग्रौर न ही भाद्रपद मास में हरे रहना है। एक ही स्थिति में होना, न बढ़ना न घटना, न बलवान होना न निर्बल होना, ग्रादि ग्रभिप्राय हैं। चाहे गर्मी हो या सर्दी बसन्त, हो या शिशिर, वृक्ष न सूखेगा, न हरा होगा।

४ ध्याड़ा

दिन का पर्याय ध्याड़ा है। वर्णन इस प्रकार है :—

ध्याड़ा सौरना—दिन चढ़ना, सूर्योदय होना, संयोगवश प्रिय ग्रथवा पूज्य जन के दर्शन का लाभ, जैसे वाग्व्यवहार में :—

ग्रज ध्याड़ा कुतांह तें सौरेग्रा?

ग्राज दिन कहां से निकल रहा है? इसका भाव है कि ग्राप किस ग्रोर से पधार रहे हैं? सदैव ग्राप का शुभागमन प्रतीक्षित है। मन की ग्राशा ग्रब पूर्ण हो रही है।

खरा ध्याड़ा चढ़ना—सुदिन होना, प्रसन्नता, मेल, मिलाप, सद्भाव, हास्य लास्य में दिन व्यतीत होना।

माड़े ध्याड़े ग्रौनें—बुरे दिन, संकट, बेचैनी, ग्रसफलता का संकेत मिलता है।

कध्याड़ा होणा—दिन ग्रच्छा न बीतना।

दिन गिनना—दिन पूरे करना—जीवन में ग्रमूल्य समय बिना काम धन्धा किये व्यतीत करना।

दिन रात इक करी देना—निरन्तर लक्ष्य सिद्धि में जुटे रहना।

दिन रात नी दिखणा—ग्रथक प्रयत्न करना।

दिने तारे दुसणा—ग्रंट संट कहना, सुनना ग्रौर देखना।

जाणा दूर ध्याड़ा थक्क—ग्रभिप्राय है—जीवन के लम्बे लम्बे रास्ते हैं। ग्रनेक योजनाएं हैं पर दिन इतने नहीं जिन में ये कार्यान्वित हो सकें।

ग्रज्ज—ग्राज के विषय में व्यवहार इस प्रकार है :—

ग्रज मेरा कल तेरा—ग्राज मेरी कल तेरी। दशा का चक्र कालचक्र की भांति घूमता रहता है। सब को पर्याय में दुख-सुख भोगना पड़ता है।

कल—कल कुनी दिक्खेग्रा-चिन्देग्रा—कल का भरोसा नहीं ग्राज का काम कल पर नहीं छोड़ना चाहिये।
कल्ले दा नां कल—कल जो करना सो ग्रब कर लो, कल पता नहीं क्या बीतेगा—जीऐंगे या मरेंगे।

ग्रजकल—ग्रजकल करना—टाल मटोल करना, किसी काम को ग्रारम्भ नहीं करना। ग्राज नहीं तो कल सही ऐसे ब्याज करते रहना।

ग्रज मोए कल दूग्रा ध्याड़ा—संसार में कई व्यक्ति ऐसे हैं जिन को किसी की कोई परवाह नहीं। स्वार्थ में लीन है। जीवन व्यतीत हो जाता है—कोई पूछताछ नहीं होती है, वे ग्राज मरें तो कल दूसरा दिन हो जाएगा – सब भूल जाएंगे परन्तु परोपकारी व्यक्ति की याद सदा ताज़ा है। वे सदा मन में समाये रहते हैं।

म्यागः—प्रातः काल के लिये म्याग शब्द का व्यवहार है।
जित्थू कुक्कड़ नी हुन्दे, तित्थू म्याग नी हुन्दी?

क्या जहां मुर्गे न होंगे वहां प्रातःकाल न होगा? ग्रभिप्राय है—कि यह ग्रावश्यक नहीं है कि मुर्गा जब बांग देगा तभी प्रभात बेला होगी। मुर्गा प्रभात को रोक नहीं सकता। इसी तरह यदि ग्राप हमारा काम नहीं करोगे तो ग्रापके बिना काम नहीं रुकेगा। हम में भी काम निपटाने की शक्ति है—ऐसा व्यंग्य प्रकटित है।

ग्रपणी काणी, म्यागा उठी हक पाणी—ग्रभिप्राय है—ग्रपना ग्रपना, गैर-गैर, पराई चोपड़ी को देखकर दिल क्यों ललचाना है? जो समय पर काम ग्राए ग्रच्छा या बुरा, जैसा भी हो, वह ग्रपना है।
संझ-म्याग—यह समस्त पद सायं प्रातः के ग्रर्थ में प्रयुक्त है।

संझा होर, म्यागा होर—समयानुसार परिवर्तन, एक चित्त होकर न सुनना, न करना।

संझ म्याग लगणी—सायं प्रात प्रतीक्षा में रहना, सावधान रहना।

म्यागा दा निगलेग्रा संझा जो भुली जान्दा—प्रातः खाया हुग्रा, सांय को भूल जाता है। कृतघ्नता सी है—कि जो भी उपकार करो उसे भूलाने में देर नहीं लगती है।

म्यागा दा भुलया संझा जो घरे ग्राई जाए तां भुल्लेया नी समझणा—प्रातः का भूला (यदि) सायं को घर ग्रा जाए तो (उसे) भूला नहीं समझना चाहिये ग्रर्थात् यदि कोई विचारशील होकर ग्रपना ग्रपराध स्वीकार कर ले ग्रौर क्षमा याचना कर ले तो उसे ग्रपराधी नहीं समझना चाहिये।

रात—रात्रि काली ग्रौर घोर होती है—इसे भीमकर्मा कहते हैं क्योंकि घोर, जघन्य कर्म रात्रि में ही होते हैं।

न्हेर मचाणा—रात्रि की तरह ग्रन्धेरा, उलट पुलट, उथल पुथल मचाना, किसी की परवाह न करना।

राती बी भन्नी गल बी नी बणी—रात्रि के इतने कठिन समय में काम किया पर सिद्धि न हुई। कष्ट सहने पर भी सफलता न मिली।

रातीं दा चिन्त्रेया पूरा नी हुन्दा—रात्रि में निर्धारित योजना की सिद्धि नहीं होती है। रात्रि का समय शुभ नहीं है—सब विचार दिन में भली भांति होना चाहिये।

रात धक्क सुपने मते—दिन में जो हम न कर सकें वह स्वप्न में सिद्ध हुआ दिखाई देता है। स्वप्न इतने होते हैं—कि रात तुरन्त बीत जाती है परन्तु सपने पूरे नहीं होते हैं। मन के लड्डू बनाना, हवा में महल बनाना। मन की कामना मन में ही रह जाना आदि भाव हैं।

अत्तां मत्तां रात पोए पूणी कत्तां:——दिन में दौड़ धूप, उछल कूद और कोई काम न करना, टाल मटोल करते रहना और रात पड़ने पर काम आरम्भ करना जो पूरा न हो सके। ऐसा काम करने वाला पुरुष लेहलड़ 'दीर्घसूत्री' और महिला 'धिन्तोमास्सी' पुकारी जाती है।

घड़ी पल छिण :—न्यूनतम समय का विचार इन प्रकरणों में पाया जाता है:—

इक इक घड़ी लम्मी होणा—थोड़ा समय भी कठिनता से गुजरना, काम काज कुछ न होना, वियोग में सुध खोना।

घड़ी पल गिणना—मुहूर्त्त देखते रहना, कुछ काम न करना, शंका में पड़े रहना।

घड़ीआ दा प्रौहणा—कुछ देर का अतिथि जो सम्भवत: सदा के लिये जाए।

पल छिण न्याहलणां—थोड़ी देर प्रतीक्षा करना, समय नाश न करना और अपने काम में जुट जाना।

टक लगाणीं:—आश्चर्य, सन्देह आदि की स्थिति में लगातार देखते रहना कुछ समझ न पाना।

मिटक मारना:——आंख से इशारा करना, शरारत सूझना, अपने अभिप्राय का संकेत सम्बन्धित व्यक्ति को इस रूप में देना कि पास रहने वाला भी कुछ न समझ सके।

५ वार ग्रह

नवग्रहों की परम्परा भी सुरक्षित मिलती है:—

सनीचरें दी दसा, सनीचर बौहणां:—शनि की दशा इतनी अशुभ है—कि कोई काम पूरा नहीं होता है। जहां भी हाथ पड़े खाली लौटना पड़ता है।

साढ़सती बढणी—परिश्रम करने पर भी कई दिनों तक कार्यसिद्धि न होना।

ग्रह खर नी होणे:—पग पग पर असफलता का सामना करना।

मरना बक्खी सुक्कर साम्हणे—मरणासन्न होने पर भी ग्रहगोचर करना। यह न सोचना कि मृत्यु पर ग्रह नक्षत्रों के पाठ से विजय नहीं हो सकती है।

६. नछत्तर, रास, तित्थ

नक्षत्र, राशि और तिथि की गणना प्रतिदिन होती है।

नछत्तर खरा होणा—भाग्योदय होने पर सब नक्षत्र अच्छे होते हैं—सब मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती हैं।

नछत्तरी होणा—भाग्यवान होना, किसी भी काम में हाथ डालो, सफलता मिल जाएगी।

तारे गिणना:—आकाश की ओर देखते रहना—कालक्षेप करना, एक ही स्थान पर बैठे रहना और हाथ-पांव न हिलाना।

मीन-मेख कढणा:—मीन-मेष राशि निकालते रहना, नुक्ताचीनी करना। किसी बात को न मानना, यहां तक कि खान-पान आदि में भी त्रुटि दिखाते रहना।

लग्न लैणा:—ठीक समय पर पहुंचना। किसी को रोकना हो तो उसे कहा जाता है—कि अमुक स्थान पर ठीक समय पर पहुंचना लग्न लेने की तरह आवश्यक नहीं है।

दुतीआ दा चन्द्रमा:—दूज का चान्द गौर से दिखाई देता है। देर के बाद मिलने पर ऐसा भाव व्यक्त करना—कभी-कभी दर्शन देना, छुप-छुप कर या दूर रहना, याद करने पर भी देर से मिलना।

रास मिलण:—एक जैसा स्वभाव होना।

७. समा, वेला, मौक्का, वग्त

व्यापक रूप में समय का परिचय देने में इन शब्दों का व्यवहार है।

समा न बारी बार:—समय बार बार नहीं लौटता है, जो कुछ करना हो तत्काल कर लेना चाहिए।

समा कुसी जो नी न्याहलदा—समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता है। प्रातः के उपरान्त सायं अवश्य होगी।

समे साही बड्डा कोई नी:—समय महान है—इसके बराबर कोई तुलना में नहीं आता है।

वेल्ला हत्थें औन्दा पर बेल्ला हत्थें नी औन्दा:—समय लौट कर नहीं आता है। धन-धान्य सब कुछ मिल जाता है परन्तु यह घड़ी लौटकर न आएगी। इस लिये समय का सदुपयोग करना चाहिये।

अपणा से ई जेड़ा बेल्ले पर पुकारे—अपना वही है जो समय पर काम आये, जो समय पर न मिले वह बन्धु बान्धव नाम मात्र है।

मोके दी ठोक्कर खाणा:—समय पर संकट का संकेत मिलना पर संभलना नहीं और परिणामत: कष्टमय समय व्यतीत करना।

औक्खा सखाला वगत कटणा:—बुरा भला समय देखना, इस में घबराना नहीं परन्तु साहस और धैर्य से काम लेना।

वक्ते दा खुंहजेया सौ कोह दूर निकली जान्दा :—समय की अवहेलना करने वाला पथभ्रष्ट हो कर कोसों दूर चला जाता है। उसे सद् असद् का विवेक नहीं रहता है। इसका परिणाम पश्चाताप होता है।

खोटा पुत्त कने डऊआ वक्ते पर कम्मे औन्दा :—संसार में तुच्छ किसी को नहीं समझना चाहिये। न जाने किस समय निकम्मी वस्तु या निकम्मा व्यक्ति काम आएगा।

८. समय वाचक अव्यय

समय का बोध कराने वाले अव्ययों के अनेक रूप हैं, जैसे छोड़, सताब्बी 'शीघ्र', होलें 'धीरे,' चाणचक, पौणपटाक्के 'अकस्मात्' आदि। इनमें से कतिपय प्रयोग इस प्रकार हैं :—

तुरत दान, महा कल्याण :—जो मांगा सो उसी समय देना—मनुष्य की ऐसी वृत्ति होनी चाहिये।

गलाया, झट कमाया :—कहा और तुरन्त किया—मनुष्य में ऐसी कुशलता होनी चाहिये।

झट मंगणी, पट ब्याह :—काम तुरन्त करना—कल के भरोसे न रहना जिससे बनी बनाई बात बिगड़ जाए।

अग्गे दौड़ पिच्छे चौड़ :——बिना विचारे काम करना—भविष्य की ओर ध्यान देना पर भूतकाल और वर्तमान की गणना न करना। घर को लुटा कर बाहरी सम्पत्ति के लिये भाग दौड़ करना।

उन कत्ती सण किती, फिरी तिसा ई गत्तो :—चारों ओर हाथ-पैर मारना पर पल्ले कुछ न पड़ना। दिन-रात काम करते रहना परन्तु सफलता न मिलना।

जाल्हो तिक्कर सास ताल्हो तिक्कर आस :—जब तक श्वास है तब तक आशा बन्धी रहती है। आशा बलवती है, जीवन में अनेक कामनाएं होती हैं।

आम्ले दा खादेया कने स्याणेआं दा गलाया बाद च खरा लगदा :——आम्ले की तरह बड़ों का कहना पहले खट्टा लगता है। आमला खाने के बाद पानी का जैसा स्वाद लगता है वैसा ही कालान्तर में बड़ों का कहना भला मीठा लगता है। उनके निर्देश में किया कठिन परिश्रम समय आने पर फलदायक होता है। इसलिये बड़ों का कहना मानना चाहिये।

९. भाववाचक

अनेक वाक्य या वाक्यांश ऐसे हैं जिन में समय के गुणों का आभास मिलता है। शकुन शास्त्र में पशु-पक्षियों का दर्शन और उनकी ध्वनि, वायु की गति, प्रकृति में अनेक लीलाएं, व्यक्ति के अंग स्फुरण आदि से भला-बुरा समय बताया जाता है। इन सब का वर्णन यहां प्रस्तुत लेख की मर्यादा के अनुकूल नहीं है। कतिपय भाव इस प्रकार व्यक्त हैं :—

मत्था ठणकणा—भले या बुरे समय का आभास होना।

सज्जी हाख फुरकणी :—सज्जी बांह फरकणी—शुभ दर्शन या प्रिय का मिलन होना।

खब्बी हाख फरकणी, खब्बी बांह फरकणी :—अशुभ होना या वियोग दशा होना।

संख बजणा :—अन्तिम समय आ जाना।

गरड़ बाचणा :—अन्तिम संस्कार करना जिसमें गरुड़ पुराण का पाठ किया जाता है।

पत्री बाचणा :—समय पर लेखा जोखा करना, भाग जाना।

बिल्लीएं छिकणा——आनाकानी करना, किसी काम को पूरा करने का विश्वास, दिलाना, पर करना नहीं। तदर्थ बहाना करना, जिसमें व्यंग्य कसा जाता है—कि जब काम करने की बारी आयी तो बिल्ली ने छींक मार दी—इस लिये काम न हो सका।

खरा खोट्टा दुसणा :—समयानुसार कष्ट भोगना, भला बुरा समय आना।

सोच्चयां किछ नी बणना—केवल विचारमग्न रहना और समय का उपयोग न करना। ऐसा करने से कल्याण सम्भव नहीं होता है।

गल्लां होई बीतियां कने हत्थें किछ नी लग्गा :—समय-समय पर बड़ी बातें बनीं पर फल कुछ न हुआ। बहुत सोचा-विचारा पर पल्ले कुछ न पड़ा।

पेट्टे पेइयां रोटियां, गल्लां बाकी खोटीआं :—यदि पकी पकाई रोटी मिल जाए तो हाथ-पैर किस लिये हिलाएं ? काल-क्षेप करना, अपना स्वार्थ सिद्ध करना और काम कुछ न करना।

जिस्दा ब्याह तिस्दे गीत :—समय के अनुसार कार्य करना, यथा योग्य साधन जुटाना।

गिदड़ी दा ब्याह :—धूप और वर्षा का साथ-साथ होना। प्रकृति की छटा जिसमें यह न कहा जा सके कि अब वर्षा होगी या धूप।

कवालू दब्बी औणा :—ऐसा काम बताना जिससे दूसरा रोक न सके और शीघ्र अपने लक्ष्य की ओर बढ़ा जा सके।

चोरे दा मन काल्हा :—अपराधी यदि अधिक समय ठहर न सके तो उसकी गतिविधि मनोवेग से पहिचाननी चाहिये। पूछताछ के भय से अपराधी उतावला रहता है और भागने का यत्न करता है।

हास्से दा बनास्सा :—ऐसा हंसी ठट्ठा नहीं करना चाहिये जिसका परिणाम दुखद हो और सब का समय नष्ट हो।

आप्प मोए जग परलै :—सब कुछ अपने तक ही सीमित रखना, अपने सामने किसी की गणना न करना, ऐसा भाव रखना कि हम नहीं तो दुनिया ही नहीं।

जलदे घरे दी बौंकरी सही :–जलदे घरे दे गोहट्टू सही—सवनाश होने पर जो कुछ हाथ लग जाए, वही भला। समय पर जो पाया, सब ठीक है।

कुव्वे जो लत्त कारीश्रा श्राई :–ऐसा समय श्राना जिसमें दुःख दुःख न रह कर परम सुख बन जाए, बला टल जाए। कोई व्यक्ति कितना ही बुरा चाहे पर परिणाम भला हो।

बेडी बी उवार भत बी त्यार :– किसी को टालने के लिये कहना–कि यदि तुम यहां अधिक समय ठहरोगे, तो अपना काम न बना पाश्रोगे। यदि भोजन की प्रतीक्षा में रहोगे तो नाव चली जाएगी, अच्छा हो, तुम जाश्रो जिससे हमारा भोजन बचे, ऐसी मन की बात स्पष्ट न कह कर बिन बुलाए मेहमान को समस्या में डालना।

निष्कर्ष:

खुश्राणों का अध्ययन ऐतिहासिक दृष्टि में महत्वपूर्ण है। एक ही वाक्य या वाक्यांश में देश और काल का घटनाचक्र वर्णित होता है जिसमें एक लम्बी कहानी होती है। हम जाने या न जाने कि इसका श्राविर्भाव कब हुश्रा परन्तु श्रुति की धारा अक्षुण्ण रूप में चिरन्तन से प्रवाहित होती चली श्रा रही है।

चोश्रापन में इन वाक्यों या वाक्यांशों की तुलना विशेषज्ञों ने नाविक के तीर से की हुई है—जो देखने को छोटे होते हैं पर घाव गम्भीर करते हैं, इसी तरह से ये वाक्यांश भावाशय में गहन होते हैं। इन में एक-एक शब्द महत्वपूर्ण है।

गवेषणा में हिमाचली सभ्यता, संस्कृति और भाषा को श्राप स्पष्ट झलकेगी—ऐसी आशा क्षेत्रीय अनुसन्धित्सुश्रों से है।

—वि० वि० शोध संस्थान,
पंजाब विश्वविद्यालय,
साधु आश्रम, होशियारपुर।

चम्बा क्षेत्र की लोकोक्तियां तथा मुहावरे

—हरि प्रसाद सुमन

'लोकोक्ति' शब्द का सामान्य अर्थ लोगों की उक्ति है। किन्तु वस्तुतः इसमें वही उक्ति आती है जिसमें 'लोक' का गहन अनुभव सूत्र रूप में संचित रहता है। इस में शिक्षा भी होती है, नीति भी होती है तथा सूत्र रूप में होने से प्रभावपूर्णता भी होती है। चम्बयाली भाषा में लोकोक्तियों को 'उपनाण' कहते हैं और लोक साहित्य के अन्य अंगों की भांति चम्बयाली लोक साहित्य में (उपनाणों) लोकोक्तियों की भी अत्यन्त भरमार है। लोकोक्तियों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वैदिक काल से ही इनका प्रयोग साहित्य में मिलता है। केवल ग्रामीण लोग ही नहीं, अपितु सुसंस्कृत, सुसभ्य नागरिक भी अपने वार्तालाप में लोकोक्तियों तथा मुहावरों का प्रयोग करता है तथा इनके माध्यम से अपनी युक्ति तथा तर्क को पुष्ट बनाने का प्रयास करता है।

लोकोक्तियों तथा मुहावरों के समावेश से भाषा सजीव, सरस तथा प्रभावशाली बन जाती है। प्रस्तुत लेख में चम्बा क्षेत्र के मुहावरों तथा लोकोक्तियों का अर्थ सहित दिग्दर्शन कराने का प्रयास किया जा रहा है। ये लोकोक्तियां प्रायः सभी देशों एवं प्रदेशों के साहित्य में कुछ शब्दों के अन्तर से समान रूप से मिलती हैं, इसी से लोकसाहित्य की सार्वभौमिकता तथा विश्व व्यापकता का भी हमें परिचय मिलता है। इसके अतिरिक्त लोकोक्तियों का क्षेत्र भी व्यापक होता है। कृषि, विज्ञान, धर्म, नीति, कला, संस्कृति, समाज-शिक्षा, दर्शन आदि सभी विषयों पर लोकोक्तियां हमें मिलेंगी, किन्तु इसके निर्माता अज्ञात ही रहते हैं।

लोकोक्ति	अर्थ
1. अन्ही मा पुत्रा जो नी पुछयाणदी।	अफरा तफरी पड़ना।
2. अठ्ठ पूर्विये नौ चूल्हे।	अलग-अलग खिचड़ी पकाना।
3. अन्हे अग्गे रूणा हाखी रा काल।	सुनवाई न करने वाले अफसर के आगे आत्मव्यथा सुनाना बेकार।
4. अप्पू ता रंड दूए रे चूडे बी गंढ।	अपने जैसा दूसरे को बनाने का यत्न।
5. अल्ल पल्ल कराड़े रे घरा जो चल्ल।	बेकार वस्तु दूसरों को देना।
6. अप्पू मियां मांगते द्वार खड़े दरवेश।	झूठी शान।
7. अपणे नी जम्मे ते लोके रे नी गम्मे।	निःसन्तान को दूसरों के बच्चे भी अच्छे नहीं लगते।
8. इक्की नगरा दो अन्ध।	असमानता।
9. इक्क नांह सौ सुख।	कोरा जवाब दे देने से आदमी पीछे नहीं लगता।
10. इक्क मेरी जिन्दड़ी, चियू खां कि पिन्दड़ी।	अकेला क्या-क्या काम करे।
11. इक्की लकड़िये चुल्ह नी बलन्दी।	अकेला क्या-क्या काम करे।

लोकोक्ति	अर्थ
12. इकलाचे घरे री कुत्ती टुकड़ा खाओ कि घुघो।	अकेला क्या-क्या काम करे।
13. इक्क चुप सौ सुख।	मौने सर्वार्थ साधन।
14. इक थुक्को हिक्क सुको, सौ थुकन तला भरी हुन्दा।	एकता में बल है।
15. उखली अन्द्र मून्ड दित्ता ता दबके का कै डरणा।	किसी काम को करने का निश्चय कर लिया तो कष्टों से क्या डरना।
16. उनाले री गंढ ते चनाले रा संग।	दुर्जन की संगति (मित्रता) देर तक नहीं रहती।
17. ऊणा घड़ा छलकन्दा।	अधजल गगरी छलकत जाये।
18. ए जुग मिट्ठा, अगला कुनी दिट्ठा।	वर्तमान काल ही अच्छा, भविष्य की चिंता कौन करे।
19. कुठ, कौड़, बणेरा, मखीर गणेरा।	कुट्ठ तथा कौड़ दो वनस्पतियां जंगल की और शहद मधु मक्खी का तीनों मिला कर चाटी जायें तो खांसी का नाश हो जाता है।
20. कपाही रा जीजू नंगे रा नंगा।	कपास का कीड़ा कपास में रहने पर भी नंगा रहता है (भाग्यहीन)।
21. कक्कड़ मक्कड़ हवलाह ता सान्ह रतेगे देणे।	अयोग्य व्यक्ति काम करे तो योग्य लोगों का क्या काम?
22. तुते धारे रे तोस कुत्ते वागे री बूटी?	असमानता।
23. केले रे मुष्ठा करेर बुरी।	सज्जन के पास दुर्जन का वास भला नहीं।
24. कणक खेत, कुड़ी पेट, आ जवाइयां मण्डे खा।	काम करने से पहले ही मधुर सपनों की कल्पना करना।
25. करन्दे कने नी करो तिसेरा बी खस्सम मरो।	दुष्ट के साथ दुष्टता ही बरतनी चाहिये।
26. कुम्हारे अपणा ई भाण्डा सराहणा।	अपने मुहं मियां मिट्ठू बनना।
27. काट्ठे री हंडी फिरी फिरी नी चढ़न्दी।	धोखेबाज की बात पर कोई विश्वास नहीं करता।
28. कीड़े रा खाधोरा कीड़ी का डरन्दा।	दूध का जला छाछ को फूक मार कर पीता है।
29. का, कराड़, कुत्ते रा, वसाह नी करणा सुत्तेरा।	कौआ, कुत्ता तथा बनिया इन्हें कभी सोया हुआ नहीं समझना चाहिये।
30. खाई शीत, न्हाई शीत, राज दरबारा जाई शीत।	खाने के बाद, नहाने के बाद तथा राज दरबार जाने पर आदमी को अवश्य कम्पकम्पी लगती है।
31. खान्दे नी खाण, मंजे नी बाण।	अत्यन्त निर्धन होना।
32. खोतड़ू री मर्जी बी खूंदा जो।	तुच्छ व्यक्ति की महत्वाकांक्षा।
33. खिहन्दा बी तोपन्दी बिलंगण।	तुच्छ व्यक्ति की महत्वाकांक्षा।
34. खान पीन मुसद्दी फाहे लगन गद्दी।	दूसरों के कारण दण्ड भोगना।
35. गल संगड़े, पेट दर्या।	देखने में छोटे, खाने को पेटू।
36. गिद्दड़ा जो मिलेया सेहरा, तिनि खिट्टा लाई।	तुच्छ व्यक्ति को थोड़ा सा मान मिलने पर अक्कड़ हो जाती है।
37. गंठी नी घेल्ला, चढ़णा रेला।	अपनी सामर्थ्य से बाहर काम करने की कल्पना करना।
38. गंठी नी गोहरे, लौंगे रे ढकार।	अपनी सामर्थ्य से बाहर काम करने की कल्पना करना।
39. गंठी दम, दुपैहरी ब्याह।	धन पास होने पर सब कुछ तत्काल हो सकता है।
40. खिस्टे जुट्टे छेड़ बड़ी, लंगड़ा जो तड़ेड़ बड़ी।	जैसे टूटे जूते की आवाज अधिक होती है, वैसे ही ओच्छे व्यक्ति को अभिमान बहुत होता है।
41. खेती खसमा सेती, खसम खेत ना जाए खेती खसमा खाये।	खेती का काम अपने बिना नहीं होता।
42. घाह जोड़ी लाह, ते लकड़ी जोड़ी पटाह।	घास इकट्ठा करने से लाभ होता है, लकड़ी इकट्ठी करने से नाश होता है।
43. घोड़े चढ़ी भिक्ख नी मंगीहन्दी।	मांगने वाले का स्वाभिमान नष्ट हो जाता है।
44. चमड़ी जाओ पर दमड़ी नी जाओ।	अत्यन्त कंजूस।
45. चनाली मौसी अपणे तांई।	अपने मतलब के लिये कभी कभी मनुष्य को इच्छा-विरुद्ध काम भी करने पड़ते हैं।
46. चोर नी से काहला किजो?	चोर की दाढ़ी में तिनका।
47. घर जान्दे मते सज्जणे। घर जान्दे मते बजणे गजणे॥ घर जान्दे मती धियुए। घर जान्दे कुलटा नूंहे॥	बहुत मित्रों और महफिलों से भी घर नष्ट होता है, बहुत कन्याओं तथा कुलटा बधु से भी घर नष्ट होता है।
48. छड्डेया ग्रां ता कै लैणां नां?	जब किसी वस्तु को त्याग दिया तो उसका नाम क्यों लें?
49. छाही रे तांई मुच्छा मुनाई, न मुच्छां ना छाह।	किसी वस्तु की प्राप्ति के लिये यत्न करने पर भी वस्तु हाथ न आना।
50. छोकरू री यारी, टौकरू रा पीहणा।	छोटों के साथ मित्रता रखने पर हानि उठाना।
51. जितणी खाखा, तितणी भाखा।	जितने मुहं उतनी बातें।
52. जिनी लाई गल्ला, तिसकने उठी चल्ला।	दूसरों के कहने पर चलना।
53. जिस पासे हण्डू डोई, तिस पासे सभ कोई।	खिलाने पिलाने वाले के सभी साथी बन जाते हैं।
54. जढ़ा चली गेई, तढ़ा नी गई।	रस्सी जल गई, बल नहीं गया।
55. जिसेरा सोठा, तिसेरी मैंहं।	ताकतवर की जीत।
56. जे खरे कने खोट्टा, तिस जो सदेरा त्रोटा।	सज्जन के साथ कपट करने वाले का कभी पूरा नहीं पड़ता।
57. जिसा पत्तली खाणा, तिसाई छिण्डा करणा।	विश्वास-घात करना, या उपकारी के साथ अपकार करना।
58. जागन्दे री कट्टी, सुतोरे रा कट्टू।	जो जागता है वह पाता है, जो सोता है वह खोता है।
59. जिस घरा जनानी मैंहता, से घर नी रैंहन्दा।	जहां स्त्री की चलती हो, वह घर नहीं रहता।
60. झोटे जो चीण्डू देणा, अपणा नैंह भन्नणा।	बलवान से टक्कर लेना अपनी ही हानि कराना।
61. डुग्घे पाणी बि नी जाणा, बड्डी मच्छी बी मेरी।	बिना परिश्रम किये बहुत प्राप्ति की आशा रखना।
62. तरणे जो अधीनपी, डुबणे जो घमण्ड।	नम्रता से उन्नति व अभिमान से पतन होता है।
63. दस्स रुपेइये गंढी, हार बणां कि कंढी।	थोड़े में क्या क्या किया जाए?
64. दस्से बुढ़िये ताणो ताणे, इक्को बुढ़िये वचन प्राणे।	अस्थिर बुद्धि से अनेक उलझनें पैदा होती हैं।
65. दिन्दी खल न खाओ, से कोहलू चट्टण जाओ।	वस्तु देने पर न लेना, पीछे पछताना।
66. दिन्दी रे थण, थोहड़े ढुकणे।	देने वाले को अधिक तंग नहीं करना चाहिये।

tharahkardu.in

67.	दान्द नां देणे गाह जो, ते जनानी नी भेजणी ब्याह जो ।	दूसरों की फसल गाहने को बैल नहीं देन चाहियें और विवाह में स्त्री को अकेले नहीं भेजना चाहिये।
68.	देयों से दाता, चाहो से नाता।	देने वाला दाता और चाहने वाला ही सच्चा बन्धु होता है ।
69.	धियाड़ी अत्ता बत्ता, राती चर्खे कत्ता ।	दिन में इधर उधर की बातें और रात को चरखें में कातना आरम्भ करना ।
70.	दाई कछ कै पैट लुकाणा ?	घर के भेदी से क्या छिपाव करना।
71.	धियाड़े मारी चुभ्भी, ता नच्चणा लगी बुड्डी।	समय बीत जाने पर काम शुरू करना ।
72.	धियुआं गौवन्दी मते हास्से, ते पुत्र गौवन्दे मते तमाशे ।	बहुत हंसी मजाक से बेटी बिगड़ जाती है तथा बहुत खेल तमाशों से बेटे बिगड़ जाते हैं ।
73.	न मन्नो भेखी, ता कैलाणी सेखी ।	ना मानने वाले से अनुरोध करना बेकार ।
74.	नदी कनारे झोंपड़ा, इक दिन होये नाशा।	नदी के किनारे घर बनाना भय का कारण ही होता है ।
75.	ना रुच्चयों मूहें, ता खा मेरियें नूंहे।	अरुचिकर वस्तु दूसरों को देना ।
76.	नौई मढ़ी रा चेला, बगत जाणे ना वेला।	असमय, काम करना ।
77.	निमली पिच्छ, प्रगड़े बोही पीणी।	स्पष्टवादी ।
78.	पत्तली रा दुद्ध, ना मैं ना तुद्ध ।	न खेलेंगे न खेलने देंगे ।
79.	पल्ले पर हुन्दी गल्लां।	धनवान होने पर ही अभिमान से बातें होती हैं ।
80.	पुत्र दगा देई जाल्ला, कुत्र दगा नी दिन्दा।	बेटा धोखा दे सकता है, कुत्ता धोखा नहीं देता ।
81.	बाहरे शीश पट्टी, अन्द्रे जूए घट्टी।	ऊंची दुकान फीका पकवान।
82.	बाहरे टिक्के तारे, अन्द्रे जूए रे खारे ।	ऊंची दुकान फीका पकवान ।
83.	पहली पत्त कपड़ा, दुई पत्त छन्न, त्री पत घरे री नार, चौथी पत्त अन्न ।	चार चीजें मनुष्य की लज्जा रखती हैं और सम्मान दिलाती हैं । अच्छे वस्त्र, अच्छा मकान, अच्छी स्त्री और अच्छा अन्न ।
84.	पत्थरा तू गोल किहयां हुआ, ए रुलकी रुलकी करी ।	कष्ट सहन करके ही मनुष्य पक्का होता है ।
85.	बण्हा नी लाणा अगाड़ी, ते ठाकुरा जो नी देणी वाड़ी ।	बण्हा आगे नहीं लगाना चाहिये तथा अभिमानी को समीप नहीं बसाना चाहिये ।
86.	बगानी बुद्धि, ता घर कुद्धी ?	दूसरों की बुद्धि से घर नहीं चलता ।
87.	बन्दो पैर ता हुन्दी खैर।	नम्रता में ही बचाव है ।
88.	बुड्डी रा जाया, ते माघे रा वाया ?	बुढ़ापे की सन्तान तथा माघ में बोई फसल बहुत कमजोर होती है ।
89.	भुक्खा नी लाणा बीए, ते रजोरा नी लाणा प्रीहे।	भूखे व्यक्ति को बीज बोने के लिये व सन्तुष्ट व्यक्ति को अन्न परोसने के लिये नहीं लगाना चाहिये ।
90.	भर सोहे वड़ नंगा, भर ह्यिून्दे डूम नंगा।	अभागा ।
91.	माणी कछा कठाले बघी चले।	छोटे मुंह बड़ी बात।
92.	मूए मड़े, से डाढ़ी रे घरे।	अपनी कठिनाई दूसरों के सिर ।
93.	मैंह्यी रे सिंग जनानी री अक्कल पिचावखी हुन्दी ।	नारी की बुद्धि बाद में जागृत होती है ।
94.	मुइये मेखे तू कुस लेखे ?	तुच्छ व्यक्ति का गिनती में न आना ।

95.	मियरा ब्याह अतें कुकड़याले रा घाह	दिखावा, (आडम्बर) ।
96.	मियें री तड़ेड़ ते कुकड़ी री छेड़।	अभिमानी का घमण्ड दिखावा होता है ।
97.	मुगल मूए ता गुलामा राज।	एक के बाद दूसरी बुराई ।
98.	मूंढे पर जुंगला, घरा जो हक्कां ।	बेटा गोद में, ढिंढोरा नगर में ।
99.	माक्खी रे घरे महाराज कुधी ?	छोटे के पास बड़ों का आगमन ।
100.	मिट्टी अणणी मिटयान्हें री ते धियु अणणी घरान्हे री ।	मिट्टी खान की तथा बहु अच्छे घर की लानी चाहिये ।

मुहावरे

'मुहावरा' शब्द अरबी भाषा का है जिसका अर्थ है परस्पर बातचीत या प्रश्नोत्तर । अंग्रेजी में इसे 'ईडियम' कहते हैं । हिन्दी तथा संस्कृत में इस के लिये 'बाधारा' शब्द का प्रयोग होने लगा है । मुहावरा किसी भाषा अथवा उपभाषा (बोली) में प्रयुक्त होने वाला वाक्य खण्ड है जो अपने प्रभाव से समस्त वाक्य को सबल, सतेज और रोचक बना देता है । संस्कृत साहित्य में मुहावरों का प्रचुर प्रयोग मिलता है । जल तुम्बिका न्याय, काक ताली न्याय, गज निमीलिका न्याय, सूचि भेध तम: आदि का प्रयोग इसका प्रमाण है । लोक भाषा में भी मुहावरों का अत्यधिक प्रयोग होते पर भी कोई विशेष लौकिक शब्द हमें प्राप्त नहीं होता, यद्यपि सभी भाषाओं के लोक साहित्य में मुहावरों का अत्यधिक प्रयोग मिलता है । हमारे जीवन का ऐसा कोई विभाग नहीं जिसमें मुहावरों का प्रयोग न हो । इन में वाच्यार्थ से विशेष सम्बन्ध नहीं होता, लक्षणा द्वारा ही अभीष्ट अर्थ की सिद्धि होती है । मुहावरों में जन जीवन का चित्रण अत्यन्त स्पष्ट रूप से मिलता है । नीचे कुछ मुहावरों के अर्थ दिये जा रहे हैं, जिनका प्रयोग चम्बयाली लोक साहित्य में प्रचुरता से मिलता है—

	मुहावरे	अर्थ
1.	अफरी बैंहणा।	नाराज होना ।
2.	रौन्च होई रैंहणा ।	हैरान होना।
3.	पन्द पलेटणा।	बहकाना।
4.	सांये बांयें करणा।	हीले बहाने बनाना ।
5.	धोड़े बेच्ची सूणा।	निश्चिन्त होना ।
6.	अड़िये जंघां भन्नणा ।	जिद्द करना ।
7.	टीण्डे हलकाणा।	आंखें दिखाना ।
8.	मोए जो हक्कां देणा ।	वृथा प्रयास करना ।
9.	पिठोरे जो पीहणा।	वृथा प्रयास करना ।
10.	घियु खिचड़ी हूणा।	बहुत मेलजोल होना ।
11.	बगानी सुथणी जंघ देणा ।	दूसरे के काम में दखल देना ।
12.	मोहले मोहले कन्न बिझणा।	बहुत नसीहत मिलना ।
13.	हाक्खी दस्सणा।	रौब दिखाना ।
14.	रड़ रड़ लाणा ।	बेकार बकते रहना ।
15.	पंजे ई घियुआ विच्च हूणा ।	बहुत लाभ होना ।

16. रोह लाणा।	शिकायत करना ।
17. तत्ते थम्ह त्रोड़णा ।	तत्काल काम कराना ।
18. दम्म फंडणा ।	आराम करना ।
19. रड़ी रड़ी कोले हूणा।	ईर्ष्यावश जलना।
20. इक्की लकड़िये जली मरणा।	ईर्ष्यावश जलना ।
21. पट्ठुर पाई बैहणा ।	घात लगा कर बैठना ।
22. गोहटे कक्कड़ मारणा ।	बहुत सस्ते दाम खरीदना ।
23. सुन्न हूणा।	सन्न रह जाना।
24. कौंटा मारणा।	बहुत जोर से चिल्लाना।
25. फुट्टी मरना।	फूले न समाना ।
26. खौढल पाणा।	अन्धेर मचाना।
27. रफ्फड़ पाणा ।	उलझन डालना ।
28. नक्का साह् लेणा ।	नाकों दम करना ।
29. खधल पाणा।	अस्पष्टता उत्पन्न करना ।
30. सिद्ध परतणा।	पीठ दिखाना ।
31. अणकी पर पड़दा पूणा ।	अकल पर पर्दा गिरना ।
32. फाह् बढ़णा।	बेगार करना ।
33. भेड़चाल दस्सणा ।	अन्धानुकरण करना ।
34. खसे फसे करणा।	काना फूसी करना ।
35. दाली अन्दर काला हूणा।	सन्देह होना।
36. पितर हूणा ।	बेसुध होना ।
37. बौली पकड़णा ।	पीछा पकड़ना ।
38. टरकाई रखणा ।	टाल देना।
39. खोरखा चच्चड़ पूणा ।	उतावले होना, लम्बे सांस भरना।
40. सूई सुटकार भरणा ।	लम्बे सांस भरणा ।
41. मुत्रा अन्दर मच्छी तलणा ।	कंजूसी दिखाना ।
42. बलदी पर पूल्ला सुटणा।	जले पर नमक छिड़कना ।
43. दन्द पीहणा ।	क्रोध करना ।
44. हिक्क कुटणा ।	पश्चाताप करना।
45. थुक्की करि चटणा ।	वस्तु दे कर मांगना ।
46. खण्ड खपराले करणा ।	तोड़ फोड़ करना।
47. सप्पड़ा कने टक्कर लैणा ।	बलवान से टक्कर लेना ।
48. नक्क वड्डी सुटणा।	शर्मिन्दा करना ।
49. खौहरे हूणा।	सख्ती दिखाना ।
50. बयार पुणणा।	हवा का रुख देखना।

—सुमन कुटीर, चम्बा ।

ऊना क्षेत्र में प्रचलित मुहावरे तथा लोकोक्तियां

—खुशी राम शर्मा

क्रम संख्या	मुहावरे	हिन्दी अर्थ
1.	अख लगणा	नींद आ जाना
2.	अख चुकी दिखणा	बुरा करने की हिम्मत न करना
3.	अखीं दसणियां	धमकाना
4.	अखां कढणियां	डराना
5.	अग्ग वरनी	बहुत गर्मी पड़ना
6.	अग्ग लगणी	बहुत क्रोध आना।
7.	अग्गी दा भा	बहुत मंहगा
8.	अग्ग पिच्छें फिरना	चापलूसी करना
9.	अजकल करना	टाल मटोल करना
10.	अन्हीं पेई होणी	कहीं न्याय न होना
11.	आई चलाई	गुज़ारा मात्र
12.	अपणे पैरां पर खड़ोणा	स्वावलम्बी बनना
13.	अपणे पैरां च अप्पू कुल्हाड़ी मारना ।	अपनी हानि स्वयं करना
14.	अखीं अगें न्हेरा होंणा	चक्कर आना
15.	अकली दा अन्हां	मूर्ख
16.	इक मुठ होणा	एकता करना
17.	इक अख दिखणा	सभी को समान समझना
18.	उन्नी इक्की होणा	हानि या लाभ होना
19.	उन्नी इक्की दा फर्क	बहुत थोड़ा अन्तर
20.	उल्लू बोलने लगणा	सुनसान
21.	ओआ ऊत जाणा	सारा काम खराब होना
22.	औंद जांद लगी रैहणी	महमानों का आना जाना
23.	कड़कड़ लाई रखणा	लड़ते झगड़ते रहना
24.	कन्न खाणा	शोर मचाना
25.	कनां नूं हत्थ लाणे	तोबा करना
26.	कच्चा होंणा	शर्मिन्दा होना
27.	कालख मलणा	कलंक लगाना
28.	खाई कैं डकार न मारना	पता न लगने देना
29.	गूठा दसणा	मुकर जाना
30.	घर दर पूरा करना	हिसाब किताब पूरा करना

क्रम संख्या	मुहावरे	हिन्दी अर्थ
31.	जंगले च मंगल होणा	रौनक होना
32.	झण्डे झुलाणा	मशहूरी करना
33.	टकरां मारनियां	बहुत प्रयत्न करना
34.	टिकटिकी लाई दिखणा	एकटक देखना
35.	ठण्डे साह भरने	आहें भरना
36.	ठण्डे होणा	शान्त होना (क्रोध उतर जाना)
37.	डंडे बजाणे	बेकार घूमना
38.	ढके लपेटे बडूएं	छुपी बात या रहस्य
39.	ढिडै पीड़ पौणी	ईर्ष्या होना
40.	तमाशा दसणा	बदला लेना
41.	तरले करना	मिन्नतें करना
42.	तारे आला टट्टू	शुभ लक्षणों वाला न होना
43.	थुकी कै चटणा	कह कर मुकर जाना
44.	थले दा साह थलै उपरे दा उपर	घबरा जाना
45.	दाल नेई गलणी	मतभेद होना
46.	दो दो हत्थ करने	मुकाबिला करना
47.	दंद कडणे	व्यर्थ हंसना
48.	नक रखणा	इज्जत बचाना
49.	नक बढी देणा	बेइज्ज़ती करना
50.	नक्के हेठ न औणा	तुच्छ समझना
51.	नक्क रगड़ने	तरले करना
52.	नक्के दी सेधी जाणा	बिल्कुल सीधे जाना
53.	निरा लूण पलणा	बिल्कुल झूठ बोलना
54.	पिस्सू पौणे	फिकर पड़ना
55.	पैर उखड़ना	हार जाना
56.	पैरां च बिल्लियां	घूमते रहना
57.	फंग निकलणे	चालाकी करना सीख जाना
58.	बुक्कला च गुड़ भनणा	चुप चाप काम कर लेना
59.	भड़ास कढणी	बुड़बुड़ाना
60.	मखियां मारनियां	बेकार रहना
61.	मते पापड़ बेलणे	बहुत से काम करना
62.	मत्थे रगड़ना	मिन्नतें करना
63.	मन मारना	सन्तोष कर के बैठ जाना
64.	मरने दी बेह्ल ना होणा	अत्यन्त व्यस्त
65.	मांहु दै आटे साईं अकड़ना	बहुत अकड़ना
66.	मींगणा पाई दुध देणा	नुकसान करके काम करना
67.	मिरचां लगणां	दुःख होना

क्रम संख्या	मुहावरा	हिन्दी अर्थ
68.	मुंह जाणा	बात करना
69.	मुहं लाल होणा	गुस्सा आना
70.	मुहं उड़ी जाणा	घबरा जाना
71.	रोणा रोणा	दुःख सुनाना
72.	लक सिधा करना	ज़रा आराम करना
73.	लहू सुकणा	अत्यन्त भयभीत होना
74.	लालां चुड़नियां	मुहं में पानी भरना
75.	लिद्द करनी	हिम्मत छोड़ देना
76.	लूण हराम करना	किये को न जानना
77.	सारी उमर भठ झोकणा	सारी आयु व्यर्थ कामों में गंवाना
78.	सिरै धूड़ पाई लैणी	घर छोड़ कर चले जाना
79.	सिर खाणा	तंग करना
80.	हड्ड गोडे भनणे	बहुत चोटें लगना
81.	हत्थ धोई कै पिच्छै पौंणा	पीछे पड़ जाना
82.	हत्थ बड्डी कै देणे	हस्ताक्षर करना
83.	हत्थ बन्हीं कै	हाथ जोड़ कर
84.	हथ पैर मारने	कोशिश करना
85.	इक दिन परौहणा, दुजे दिन घरौणा	एक दिन मेहमान, दूसरे दिन घर का आदमी ।

लोकोक्तियां

क्रम संख्या	लोकोक्तियां	हिन्दी अर्थ
1.	अन्हें अगं नचणा बोले अगैं नाच	जिसे जिस काम की पहचान न हो, उसके सामने वह काम करना व्यर्थ है ।
2.	अन्हीं पीहए कुत्ते चट्टण	कहीं कोई न्याय न होना ।
3.	इक घर तां डैण बी छड्डी लैंदी	सब के साथ बुरा नहीं करना चाहिये ।
4.	इंनी क खिचड़ी, चवारे पर रसो,	थोड़ी सी वस्तु के लिये बहुत मेहनत करना ।
5.	इक तां बहुटी सोहणी बड़ी, दूआ सुत्ती उठी	भद्दी वस्तु को और भद्दी कर देना ।
6.	इक चुप सौ सुख	चुप रहना अच्छा होता है ।
7.	उप्पर पट्टियां हेठ कट्टियां	बाहर से साफ सुथरा, अन्दर गन्दा मैल होना ।
8.	उठी अप्पू ते नेई हुंदा फिटे मुंह गोडेयां दा	अपनी कमज़ोरी का दोष दूसरों पर मढ़ना ।
9.	उल्टी बाड खेते नूं खाए	रक्षक भक्षक होना
10.	ऊंट तां कुद्दे बोरे बी कुद्दे	बड़ों की नकल करना
11.	ऊंटे गलै घंटा	अनमेल का मेल करना
12.	ऊंटा च भेडां पछाणना	किसी वस्तु की ठीक पहचान करना,
13.	ओह दिन डुब्बा, जि दिन घोड़ी चढ़ेया कुब्बा	कभी किसी का कोई काम न करना
14.	कल ढोलकी मढ़ाई, अज कवि बणी बैठे	किसी काम में अपने आप को निपुण समझना ।
15.	गठी ने ई लिद्द, ठाणेदारे नैं जिद्द	पास पैसा न होने पर भी बड़ों से बैर रखना ।

क्रम संख्या	लोकोक्तियां	हिन्दी अर्थ
16.	गां नेई दच्छी, निद पेई अच्छी	कोई जिम्मेदारी न होना
17.	गूंगे दियां सैनकां गूंगे दी मां जाणदी ऐ	परिचित आदमी ही एक दूसरे की आदतों को समझते हैं ।
18.	घर बार नूए तेरा पर कोठियां हत्थ मत लांदी	बातों से ही खुश करना ।
19.	घरे दे भाग डियोढ़िया ते ही सुझी जांदे	बाहरी दिखावट से अन्दर का पता लगना ।
20.	चढ़दे नूं सब मनदे ।	बलवान का सब आदर करते हैं ।
21.	छज तां बोलै छानणी क्या?	महा दोषी
22.	जित्थै कुक्कड़ नेई उत्थै सवेर नेईं	किसी के बिना कोई काम नहीं रुकता ।
23.	जिदिया कोठिया दाणे उदे नियाणे वी सियाणे	धन पास हो, तो सब बुद्धिमान होते हैं ।
24.	जदेया तेरा नचणा गाणा, तदेया मेरा गाणा बजाणा,	जैसे को तैसा
25.	जलदे घरे दिया बौंहकरिआ	भागते चोर की लंगोटी ही सही ।
26.	जो बट्टेया सो खट्टेया	जितना लाभ, हो वह ठीक है
27.	झोटेयां दा घोल, जाड़ां दा नास	बड़ों की लड़ाई में छोटों का नुकसान ।
28.	ठण्डे दुधे नूं फूकां मारनियां	बिना बात के दूसरों को तंग करना ।
29.	तंद गठोई जांदा, ताणी नेई गठोंदी	सभी बिगड़ी बात ठीक नहीं हो सकती ।
30.	दाइयां ते पेट गुझे	अनुभवी व्यक्ति से कुछ छिपा नहीं रह सकता ।
31.	दित्ती खल न खाए, तां कोल्हू चटणा जाए	देने पर अच्छी वस्तु न लेना और स्वयं घटिया वस्तु लेने पर राजी हो जाना ।
32.	दूंह घरां दा परोहणा भुखा रैहन्दा	दो नावों पर पैर रखने से हानि होती है ।
33.	धीये धमूकड़, नूएं कन कर	कहना किसी और को सुनाना किसी और को ।
34.	बसरमे दिया पिट्ठी पर रुख जमेया, चलो छां ई सई ।	मूर्ख सजा को भी अच्छी बात समझता है ।
35.	बुड्ढी घोड़ी लाल लगाम	वृद्ध व्यक्ति का अधिक सिंगार करना
36.	भगते दी भगती कमजोर दी कमबख्ती	किसी की हंसी होना मगर दूसरे को कष्ट होना ।
37.	भेडा पर उन किसी नै नेईं छडणी	दुर्बल (गरीब) को सभी तंग करते हैं ।
38.	माऊ ते मासी हेजली	व्यर्थ स्नेह जताना ।
39.	मौईं तां जे साह नेईं आंएया।	कोई पेश न चलना ।
40.	रोंददा ऊंट नेई लदणा	किसी को मजबूर करके काम न कराना ।
41.	रोटी दूंई हत्थीं पकदी	लड़ाई दो तर्क से होती है। (लड़ाई के लिये दोनों दोषी होते हैं) ।
42.	सदी ना बुलाई मैं वी लाड़े दी ताई	बिन बुलाए किसी के काम में दखल देना।
43.	तकालां दे मोऐं नूं किन्ना क रोणा	रोज रोज कोई किसी का काम नहीं करता।
44.	हड्डां खुड्डां तेटेईं तां राम जपण डेईं ।	बूढ़े हो कर भक्त बनना ।
45.	हंकारेया सो मारेया,	घमंड का सिर नीचा।
46.	हाथी निकली गेया, पूछ रेई गेई	थोड़ा सा काम रह जाना ।

—राजकीय महाविद्यालय,
ऊना, जिला ऊना ।

कांगड़ी लोकोक्तियाँ तथा मुहावरे

—दुर्गादत्त शास्त्री

लोकोक्तियां तथा वाग्धारा (मुहावरा) का भाषा में बड़ा महत्व है । वास्तव में ये दोनों भाषा के अस्तित्व को प्रमाणित करते हैं । जैसे गीत प्रकृति की देन हैं, इसी प्रकार लोकोक्ति तथा मुहावरे भी प्रकृति की देन हैं। आप अशिक्षित लोगों के मुख से विविध प्रकार की लोकोक्तियां तथा मुहावरे सुन सकते हैं । ये प्रसंग में अनायास उनके मुंह से निकल आते हैं । लोकोक्तियां तथा मुहावरे केवल विकसित भाषा में ही नहीं, अपितु अर्धविकसित और अविकसित भाषाओं में भी पाए जाते हैं । संसार की कोई ऐसी भाषा नहीं जिस में लोकोक्ति एवं मुहावरे न मिलते हों और न ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो कहीं न कहीं इन का प्रयोग न करता हो । राजा से रंक तक कोई भी मानव इन के प्रभाव से मुक्त नहीं है ।

पहाड़ी भाषा में भी बहुत सुन्दर लोकोक्तियां तथा मुहावरे पाए जाते हैं । उदाहरणार्थ नीचे कुछ प्रस्तुत हैं :—

लोकोक्तियां

	लोकोक्ति	अर्थ
1.	कुआरा भेजया कड़माइया अपणिया करे कि पराइया।	जो मनुष्य स्वयं किसी वस्तु की आवश्यकता में हो वह उस वस्तु को दूसरे के लिये उपलब्ध नहीं करवा सकता ।
2.	कक्खें कक्खें ई लख बणदा ऐ ।	बून्द बून्द से ही घड़ा भरता है ।
3.	कुतू बणां दे रुख तां कुतू बागां दियां बूटियां।	कहां राजा भोज कहां गंगू तेली ।
4.	कुछड़े दे मारने पेटे दे निहालणे ।	निश्चित वस्तु को छोड़ कर अनिश्चित वस्तु के पीछे दौड़ना ।
5.	कत्ती पिज्जी ने कपाह बणाणी ।	बने हुए काम का बिगड़ जाना।
6.	खड्डा दे मड़े दरयाए जो सिनकां।	जब कोई छोटा आदमी अपनी सामर्थ्य से बढ़ कर काम करने लगता है।
7.	चलोंदा अप्पू ते नींह् फिटेमुंह गोडेयां दा ।	काम करने की सामर्थ्य अपने में न हो परन्तु दोष दूसरों के सिर मढ़ना।
8.	चोर तां पंड्डा छड़दा पर पंड चोरे तींह् छड़दी।	अपराधी को अपराध दंड से बचना कठिन होता है।
9.	चिकड़े आली मैंह् सत्तां पासयां छिटदी ऐ।	दोषी आदमी औरों को भी साथ लपेटना चाहता है।
10.	जिन्हां नीं दिखियां मींगणां सैंह लाए फुल्लां सींघणां।	अनाधिकारी को अधिकार देना।
11.	जदीहा बात चल्ले तदीहा उभाण बन्हणा।	अवसर के अनुसार काम करना।

tharahkardu.in

लोकोक्ति	अर्थ
12. जोक लहुए पर ई लगदी ऐ।	अपने आदमी को ही अपने की पीड़ा का अनुभव होता है।
13. धानां पिच्छे डीले जो पाणी लगणा।	किसी बड़े आदमी के साथ छोटे को लाभ पहुंचना।
14. पकड़ां तां खांदी ऐ, छड्डां तां जांदी ऐ।	जब दोनों ओर हानि दिखाई देती हो।
15. बिल्ली तां सुन्ने दी घड़ां पर स्योंऊ कुते करां।	"सांप छछूंदर की गति" जब सारी सुविधाओं के देने पर भी कोई आदमी काम न कर सके।
16. चालुए जो क्या रोंदी थी जे नक्के ते बी गई।	छलांग लगाई सागर में मिलेगा कोई रत्न खरा। रत्न हाथ आया नहीं उल्टा मुखड़े रेत भरा।।
17. मैई दा गोभा न लेएं न दलेएं।	जब कोई आदमी किसी भी काम पर ठीक न बैठता हो।
18. मैं राणी तूं राणी, कुण भरँ खूए दा पाणी।	जब कोई भी आदमी काम करने के लिये तैयार न हो।
19. सुत्तयां दे कट्टू कनें जागदयां दियां कटियां।	जागरूक आदमी ही लाभ उठाता है।
20. सूर खाए कमांदिया कने झोटे दा मुंह कुटणा।	जब अपराध कोई और करे और दण्ड किसी और को दिया जाए।

मुहावरे

मुहावरा	अर्थ
1. अपणा ई ताणा बाणा बुणना।	अपने ही मन की बात करना और किसी की न सुनना।
2. अंबरें छींडा पाणा।	बहुत जोर से चीखना।
3. अठ्ठआं बारुआं होणा।	बहुत बैर होना।
4. इकसी घुट्टए नगलोणा।	बहुत प्यार होना।
5. ऊटे दे गल् घंटा।	अनमेल बात।
6. कन्नें पैय्या नींह् सनोणा।	बहुत कोलाहल होना।
7. कच्छा हेठ रखणा।	आश्रय देना।
8. कन्नां दा कच्चा।	दूसरे के कहे पर विश्वास करने वाला।
9. कुप्पा फुलाणा।	गुस्से होना।
10. खट्टल् करना।	लज्जित करना।
11. खूए दा मीनक।	अनुभवहीन।
12. गोहटें कक्कड़ मारना।	बहुत सस्ता सौदा लेना।
13. गिन्ह् मिन्ह् करनी।	बहुत सुस्ती से काम करना।
14. चलदे घराटें गिट्टा अड़ाणा।	बनते काम में रूकावट पैदा करना।
15. चूह मुंह् निकलणा।	भेद खुलना।
16. चुंग देणा।	शरारत करना।

सोमसी

मुहावरा	अर्थ
17. चुल्ही दा चंद।	घर से बाहर न जाने वाला।
18. छांए मांए होणा।	अचानक आंखों से ओझल हो जाना।
19. छां बदलां होणा।	जल्दी जल्दी रूप बदलना।
20. छज्जे-छानणें पतारना।	बहुत बेज्जती करना।
21. छक्के-पंज्जे करना।	बिना काम के काम में लगे रहना।
22. छातिया पर मुंग दलणा।	विद्वेष का बदला लेना।
23. छिंज पाणी।	झगड़ा मोल लेना।
24. जनानड़ू बणना।	स्त्रियों जैसा स्वभाव रखना।
25. जाए बाए पढ़णा।	बिना अर्थ के बात करना।
26. जीभ अन्दर पाणी।	चुप रहना।
27. झख मारनी।	अपनी ही बात हांकना।
28. झिल सचणा।	किसी के पीछे पड़ जाना।
29. टौरी पत लाणा।	विश्वास दे कर भाग जाना।
30. ठंडे दुद्धें फूकां देणा।	बिना कष्ट के कष्ट पुकारना।

—ग्राम व डाकघर नलेटी,
त0 देहरा गोपीपुर, ज़िला कांगड़ा।

कहावतें मानव-स्वभाव तथा व्यवहार-कौशल के सिक्के के रूप में प्रचलित होती हैं और वर्तमान पीढ़ी को पूर्वजों से उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त होती हैं। पथ-प्रदर्शन की दृष्टि से भी उनकी उपादेयता सहज ही समझ में आ सकती है।

—डा0 कन्हैया लाल 'सहल'

काँगड़ी लोकोक्तियाँ

—ओंकार लाल भारद्वाज

ग्रामों में नित्यप्रति वार्तालाप के मध्य समयानुकूल लोकोक्तियों के प्रयोग की परम्परा बहुत प्राचीन है। इन लोकोक्तियों में तीर सदृश शक्ति निहित होती है। जो विद्वान एक बात को पहर भर के भाषण से भी श्रोताओं को समझाने में असमर्थ रहता है, वही बात एक ग्रामीण एक लोकोक्ति के माध्यम से पूर्णतया स्पष्ट कर देता है। हिमाचल प्रदेश की कांगड़ा घाटी में प्रायः बोली जाने वाली लोकोक्तियां प्रस्तुत हैं—

1. अपणी काणी भियागा उठी हक पाणी।
दूए दी राणी तिसाने गल किहियां लाणी॥

अपनी कानी स्त्री को सवेरे उठते ही बुला सकते हैं, दूसरे की रानी के साथ तो बात भी कैसे करें।

2. अद्धे दी खेती कनें श्राद्धे दा भत्त।
'आध की खेती तथा श्राद का भात' दोनों में ही मानसिक शान्ति नहीं होती।

3. आई मेरी परभाखी चुल्हे अग न घड़यां पाणी।
मेरी स्त्री ऐसी आई, न तो चूल्हे में आग है और न घड़ों में पानी।

4. आए नौईयां लाड़िया दे भाऊ, खान्दे पथ, लियान्दे नीं चिहाऊ।
नई दुल्हन के भाई आए, खाते तो बहुत हैं, पर लाये कुछ नहीं।

5. आए गोहरे जन तां, बिन्हां कुड़ी दे कन।
गली में बारात आई तो लड़की के कर्णवेध करो।

6. अक्कल बड़ी या मैंह।
अक्ल बड़ी या भैंस।

7. आमले दा खादेया कने सियाणे दा गलाया, बाद च मिट्ठा लगदा।
आमला खाने के बाद तथा अनुभवी व्यक्ति का कथन बाद में मीठा लगता है।

8. अपणा घर हगी भर।
पराया घर थुकणे दा भी डर।
अपने घर में टट्टी भी कर दो, पर दूसरों के घर में थूकने का भी डर रहता है।

6. अन्ही देवी नकटा पुज्यारी।
अन्धी देवी, बिना नाक के पुजारी। अर्थात् सब एक सामान।

7. आईयां मूच्छां ता कुस जो पुच्छां,
आई दाढ़ी तां गल भी बगाड़ी।
आई मूंछ तो किस को पूछना। आई दाढ़ी तो बात भी बिगड़ गई।

8. अति ओटकें बैर हुन्दा।
अति सर्वत्र बुरी होती है।

9. उठी नी होये तां जंघां जिक्कां।
उठा तो जाता नहीं और टांगों को दबाना।

10. इक नांह् सौ सुख
इक हां सौ दुख।
एक इन्कार सौ सुख एक 'हां' सौ दुःख।

11. इक दिन प्रोहणां दूए पछ्छ,
तिइए दिन घरें जान्दा अच्छा।
एक दिन अतिथि, दूसरे दिन आम आदमी और तीसरे दिन अपने घर जाता अच्छा होता है।

12. इलणीं दे अल्हें मास,
उस दी कुस जो आस।
चील के घोंसले में मांस, उससे किस को लाभ की आशा हो सकती है? अर्थात् किसी लालची व्यक्ति के पास कोई वस्तु हो तो उसका दूसरों को क्या फायदा?

13. कोई दूध दुहए जां छज्ज बजाये।
कोई दूध दूहे या छाज बजाये। जब किसी से कुछ लेना-देना नहीं तो चाहे कोई कुछ करे।

14. कणक खेत कुड़ी पेट, आ जवाईयां शीरा खाह्।
गन्दम खेत में, लड़की पेट में और दामाद तू आ कर नशास्ता खा जा। अनहोनी कल्पना।

15. कालू भेजया पत्तरां जो, न पत्तर न कालू।
कालू पत्ते लेने भेजा, न पत्ते आये न कालू। जब सन्देशवाहक लौट कर न आए, तब कहा जाता है।

16. कोढ़ रोग ने पुत्तर बजोग, बुरा हुन्दा।
कोढ़ रोग तथा पुत्र वियोग (विछोह) बुरा होता है।

17. **कजो कई कियात, तां कजो हई हियात।**
न रहेगा बांस, न बजेगी बांसुरी।

18. **कुकड़े बाझी क्या भियाग नीं हुन्दी।**
मुर्गे के बिना क्या प्रातः काल नहीं होता है?

19. **कोआं रड़ान्दे जाणा बड़ूआं पकदे जाणा।**
कौओं ने कांयें 2 करते रह जाना और बट वृक्ष के फलों ने पक जाना।

20. **कुआरा भेजया कड़माईया**
अपणी करो या पराईया।

कुंवारा कुड़माई करने भेजा, अपनी करे या दूसरे की। जिसे स्वयं भी किसी वस्तु का अभाव हो वह दूसरों का भला क्या करेगा?

21. **खादा खाण कुखाण उसते भुख्खे भले,**
चल्ले साथ कुसाथ, उस ते किल्हे भले।

बुरा खाना खाने से तो न ही खाना अच्छा है। बुरे के साथ चलने से तो अकेले चलना अच्छा है।

22. **खारी खरेहन्दी मित्रां,**
लहरान्दी खान्दी छित्रां।

अच्छी बात से मित्रता और बुरी बात से जूते भी पड़ जाते हैं।

23. **खाई सीत, नौही सीत,**
सरकारा आलीं जाई सीत।

खा कर शीत, नहा कर शीत तथा राजदरबार में जा कर शीत लगता है।

24. **खुह खुणदे जो खाता तैयार।**
खोदने वाले को गढ़ा तैयार, अर्थात् जो दूसरों का बुरा सोचता है, उसका अपना भी अनिष्ट होता है।

25. **खह खाबेयां काल नी कट्न्दा।**
अनुचित मार्ग से धन कमा कर पूरे नहीं पड़ते। या मांग कर पूरे नहीं पड़ते हैं।

26. **खोटा पैसा कने खोटा पुत्र बगता पर कम्मं औन्दा।**
खोटा सिक्का एवं कुपुत्र समय पर काम आता है।

27. **खान्वेया खाण, न मंजेयां बाण।**
न तो खाने को शेष है और न ही खाटों में बान।

28. **खती खस्मा सेहती।**
खेती स्वामी के साथ।

29. **गोही जो मिल्ली गोह**
जबेयी ओह् तबेयी ओह्।
मूर्ख को मूर्ख मिला।

30. **गठी नी धेला कने चढ़ना रेला।**
पास तो कौड़ी भी नहीं, और रेल में बैठने की चिन्ता।

31. **गठी नी गुद्दड़ कने धीया दा नां बुजकी।**
पास तो फटे वस्त्र भी नहीं और लड़की का नाम बोझ ढोने वाली।

32. **घोड़ा होर मकोड़ा पड़ावे पर बराबर पुजदा।**
घोड़ा एवं मकोड़ा (कीड़ा) पड़ाव पर साथ साथ पहुंचते हैं।

33. **घाये च घा मकोड़ा बुरा**
अड़्डी मार घोड़ा बुरा
कियाड़िया दा फोड़ा बुरा
छप्परे दा चोड़ा बुरा
कनें जोरू दा बछोड़ा बुरा।

घास में मकोड़ा घास (घास की किस्म) बुरा होता है, एड़ी मारने वाला घोड़ा भी बुरा होता है। गर्दन में हुआ फोड़ा भी बुरा होता है। मकान के भीतर छत से रिस कर पानी जाना भी बुरा होता है तथा घर वाली का बिछोड़ा भी बुरा होता है।

34. **चोपड़ियां कने दो दो।**
चोपड़ी और दो दो। दुगना लाभ।

35. **चोरे दी मां गुल घुट्आं रोन्दी।**
चोर की मां अन्दर ही अन्दर रोती है।

36. **छड्डेया ग्रां तां क्या लैणा नां।**
—ग्राम छोड़ दिया तो नाम क्या लेना।

37. **जितणी खाखां उत्तणी भाखां।**
जितने मुंह उतनी बातें।

38. **जदेया खुन्डें बन्हेयां तदेया मिरगे मारेया ।**
जैसा खुरली पर बन्धा, वैसा बाघ ने मारा । जिस से किसी प्रकार न लाभ हो, न हानि ।

39. **अम्में पुत्रां औतरी तां बिन पढ़यां श्राद्ध ।**
पुत्र होकर भी निस्संतान कहलवाना और बिना पढ़े श्राद्ध ।

जेले दा पत्थर कुआलिया ।
ताकतवर का बोलबाला ।

40. **जिसदा खाणा उस दा गाणा ।**
जिसका खाना उसी का गाना ।

41. **जिसा पतली खाणा उसा छोन्डा पाणा ।**
जिस पत्ते में खाना उसी में सुराख करना ।

42. **जिनीं कीती शर्म उसदे फुटे कर्म ।**
जिस ने शर्म की, उस के कर्म फूट गये ।

43. **जूआं पिच्छे खिन्दां फूकणी ।**
जूओं के पीछे कपड़े जलाना ।

44. **जिन्हां नीं भाली मींगणा, संह लाये फुल्लां सींगणा ।**
जिन्होंने बकरी की मींगणे (गोबर) भी नहीं देखी वही पुष्पों की सुगन्ध लेने बैठा दिये ।

45. **जिस करनी तिस भरनी ।**
जिस ने करनी उसी ने भरनी ।

46. **जिसा खेतिया खस्म नी जाये ।**
संह खेती खस्मा खाये ।
जिस खेती में स्वामी न जाये, वही खेत उस स्वामी को खा जाता है ।

47. **जिस ने करां गल्लां,**
उसने उड़ी चल्लां ।
जिसके साथ बातें करूं उसी के साथ उड़ चलूं ।

48. **जिसदे हत्थें डोई, उस दा सब कोई ।**
जिस के हाथ में कड़छी उसी का सब कोई है ।

49. **छोटे छोटेयां दी लड़ाई,**
बुड़े बूटां रा नाश ।
सांडों के युद्ध में छोटे छोटे पौधों की हानि ।

50. **टका करदा टक टकात कने टके बाझी भी टक टकात ।**
पैसा सब कुछ करता है तथा बिना पैसे लड़ाई होती है ।

51. **टिक्का टेरा टस्करेया ता कज्जल बाहणा मस्करेया ।**
मचलों ने तिलक लगाना तथा मस्करों ने काजल पाना ।
अर्थात्—तिलक तथा काजल दिखावे के अंग हैं ।

52. **टुटया गठणा पौन्दा,**
रुसेया मनाणां पौन्दा है ।

टूटे हुए की मुरम्मत करनी पड़ती है ।
नाराज़ हुए को मनाना पड़ता है ।

53. **ढोलिये अटक कने भराहिये अटक नी ।**
ढोलवाहक की देर है वरन ढोलवादक तो तैयार खड़ा है ।

54. **तौये दी कच्ची कने पियोकेयां दी कपती नी**
सुधरदी भाँए लख जोर लगा ।

तवे पर रह गई कच्ची रोटी तथा मायके में बिगड़ी हुई कन्या का लाख जोर लगाने पर भी सुधार नहीं होता है ।

55. **दित्ती जन्घ नी कुत्ता खाये ।**
मुख में दी गई टांग को भी कुत्ता नहीं खाता है ।

56. **दित्ती खल ना खाये, कने कोल्हू चटण जाये ।**
दी गई खली तो नहीं खाई और कोल्हू चाटने चली गई ।

57. **घानां पिच्छे मरीले जो पाणी ।**
धानों के साथ घास को भी पानी ।

58. **ध्याड़े दित्ता बन्दां तां अज्जे ते कल मन्दा ।**

सूर्य अस्त के समय सूर्य का घने बादलों को चीर कर चमकने का अर्थ है कि और भी मौसम खराब रहेगा ।

59. **नां बड़े ग्रां उज्जड़ ।**
नाम बड़े और ग्राम उज्जड़ ।

60. **नंगी नौहे क्या तां नचोड़े क्या ।**
नंगी नहाये क्या और निचोड़े क्या ।

61. **नाईया बाल केडे, जजमाना मुहें गेड्डे।**
नाई जी, बाल कितने! जजमान जी, मुहं के आगे ।

62. **नौंई नौखो नौ दिहाड़े पुरानों नित्त।**
नई नवेली नौ दिन तथा पुरानी नित ।

63. **न मड़ा मरे न मंज्जा छड्डे।**
न ही तो मुआ मरता है और न ही चारपाई छोड़ता है ।

64. **न गुड़ खाणा, न कन्न भनाणें।**
न गुड़ खाना न कर्णबेध करवाना ।

65. **नानी खस्म करे, दोहती चट्टी भरे।**
नानी पति करे, दोहती जुर्माना अदा करे ।

66. **पंजस्नानी महाज्ञानी, नित नौहे सैह दरिद्री।**
पंजस्नानी करने वाला महाज्ञानी तथा नित्य नहाने वाला दरिद्री होता है । (व्यंग्य) ।

67. **पच्छमें उठ्ठी बदली पूर्वे लई छायी,**
हुण समझा संझा जो बरखा आई।
पश्चिम से बदली उठी और पूर्व दिशा में छा गई, अब समझो कि सायंकाल तक वर्षा आ जायेगी।

68. **घर घर हंडेंदी धी मरे**
चाल कुचाला टट्टू।
खिड़ खड़ेन्दी नूंह मरे
मर्द मरे नखट्टू ।
दूसरे के घर में जाने वाली बेटी मारी जाती है। चाल कुचाल चलने वाला पशु मारा जाता है। अधिक हंसी वाली बहू भी मारी जाती है, नालायक मर्द भी मारा जाता है ।

69. **पर हत्थ बणज सनेहूयां खेती,**
कदी नी हुन्दे बणियां रे तेती।
दूसरे के हाथ में व्यापार और सन्देशों द्वारा खेती में कभी भी उन्नति नहीं होती है।

70. **पक्की संझ तां निम्मल पंज।**
दिन में वर्षा होने के पश्चात जब शाम को चारों ओर लाली फैल जायेगी तो उस का अर्थ यह हुआ कि अब पांच दिन मौसम खुश्क रहेगा ।

71. **पंडित वैद मशालची तिन्नों चतुर कहान।**
होरी जो दस्सण चानणां अप्पी नेहरे जान।
पंडित, वैद्य तथा मसालची ये तीनों ही चतुर कहलवाते हैं । दूसरों को रोशनी बता कर स्वयं अन्धेरे में जाते हैं ।

72. **पकड़दा है तां खान्दी है,**
छड्दा है तां जान्दी है।
पकड़ता हूं तो खाती है, छोड़ता हूं तो जाती है । अर्थात् दोनों प्रकार से कठिनाई ।

73. **बाहीं दिन बारा तां मसान्त मिहना सारा।**
बाही (संक्रान्ति के दूसरे दिन) वाले रोज कोई घटना हो जाये तो उस का पुनः 12 दिन होने का डर लगा रहता है । यदि मासान्त (संक्रान्ति से एक दिन पूर्व) वाले दिन कोई बात हो जाये तो उस का पूरा मास होने का डर लगा रहता है ।

74. **बट्टे सट्टे दी कड़माई,**
नन्दो गई बलासो आई।
अदला-बदली का रिश्ता (कुड़माई) नन्दो गई बलासो आई ।

75. **बिल्लीं तां काठ दी घड़ाऊं,**
पर मियांऊं कुस ते कराऊं ।
बिल्ली तो लकड़ी की बनवा दूं पर म्याऊं किस से करवाऊं ।

76. **बसीला या पतिला बड़ा हुन्दा।**
बसीला या पतीला (बर्तन) बड़ा होता है ।

77. **बुद्ध वरोधी शुक्र काणा,**
शनि बारें कुत्थी नी जाणा।
तुआर बावे दा बार,
सुआंरे औणां सुआरे जाणां।

बुद्धवार विरोधी और शुक्रवार काना होता है । शनि को तो कहीं नहीं जाना चाहिये। रविवार बाबा जी का दिन होता है । अतः सोमवार को आना और सोमवार को ही जाना चाहिये ।

78. **भेड़ क्या जाणें फकरू दा सुआद।**
भेड़ फफरु (एक प्रकार का पहाड़ी साग) का सुआद क्या जाने ।

79. **भेड़े मुंहएं गेड़े।**
ऐ भेड़ ! सब कुछ आगे आयेगा ।

80. **भैणां बे घर भाउ कुत्ता,**
सौहरे बे घर जुआई कुत्ता,
ओह् कुत्तेयां दा सरदार,
जेड़ा रैंहे जुआई नाल।
बहन के घर रहने पर भाई कुत्ते के सदृश होता है। ससुराल में रहने वाला दामाद भी कुत्ता होता है। वह सुसर तो कुत्तों का सरदार होता है जो सदा ही दामाद के साथ रहता है ।

81. **माऊ पर धी, बाप पर घोड़ा,**
मता नी ताह्मीं थोड़ा थोड़ा।
माता पर लड़की तथा बाप पर लड़का जाता है, चाहे बहुत न जाये तो भी थोड़ा थोड़ा ज़रूर जाता है।

82. **मारनीं नी तां कोल्लां जो झकूकां।**
मारने की तो हिम्मत नहीं और छत में लगी लकड़ी को निकालने का प्रयास ।

83. **मत बैठा कुसी दिया आसा,**
कोई नी दिन्दा अवणिया जणासा।
किसी की आशा पर मत रहो कोई भी अपनी औरत को नहीं देता है ।

84. **मत्थे दी गई कियाड़िया तां बत नी सुझदी धियाड़िया।**
माथे की जब गर्दन की ओर चली जाती है तो दिन को भी रास्ता नहीं दिखाई देता है ।

85. **मन हटेया होर दुध फटेया नी मिलदा।**
हटा हुआ मन और फटा हुआ दूध पुनः नहीं मिलते हैं ।

86. **मंगण चलया सेंह मरी मिटया,**
उसते पहले ओह मरे जेड़ा हुन्दी चीजां जो नाह करें।

जो मांगने चला वह तो खुद ही मर गया, पर उस से पूर्व वह मर जाता है जो चीज़ पास होने पर भी साफ इनकार कर देता है ।

87. **राज गीं, मेह गी चुतड़ गीं नियारा।**
राजा की इच्छा, बादलों की इच्छा और ताकतवर की इच्छा न्यारी ही होती है ।

88. **रंड घंड दे चाले, सिर मुन्ने मुंह काले।**
नीच स्त्री की चालाकी सिर मुंडवा कर मुंह काला करवा देती है ।

89. **रुपया भनाया तां गिया**
पुत्तर ब्याहया तां गिया।
रुपया तोड़ाया तो समाप्त हुआ, पुत्र की शादी कर दी तो वह भी गया ।

90. **लज लजान्दी अन्दर बड़ी,**
नक बढ़्डी बोले मेते डरी।
लाज की मारी अन्दर गई, बेशर्म बोले मुझ से डरी ।

91. **लबड़ूआं किछ नी लगदा, कने बबरूआं घीऊ लगदा।**
बोलने में तो कुछ नहीं लगता, पर पकवान बनानें में तो घी लगता है ।

92. **सौण हरे ना भादू सुक्के।**
सावन हरे न भादों सूखे ।

93. **सखी ते सूम भला, जेड़ा तुर्त देय् जवाब।**
सखी से तो सूम भला जो तुरन्त उत्तर दे देता है । दाता से कंजूस भला जो एक दम इनकार तो कर देता है । ऐसे दाता से क्या लाभ जो उत्तर ही न दे ।

94. **सखणा कने कलछणा बुरा हुन्दा।**
खाली चलने वाला और बुरा करने वाला बुरा होता है ।

95. **साड़ू साले खाई गये, तां घरे दे गान्दे गीत।**
साढ़ू-साले खा गये और घर वाले राग अलापते रह गये ।

96. **साधां क्या सुआद, जदेया गोहा तदेया प्रशाद।**
साधू को स्वाद से क्या उसे तो सभी चीजें एक जैसी हैं ।

97. **सियाणेयां दे तीन दुःख, कांग पदाई कने भुख।**
बूढ़ों के तीन दुःख—खांसी, पाद और भूख होते हैं ।

98. **शिकार बेले कुत्ती जो घाई।**
शिकार के समय कुत्ती को दीर्घ शंका ।

99. **हडडों गोड्डों बही, तां राम जप्पण डही।**
शरीर चलने से जब असमर्थ हो गया तो राम जपने बैठ गई ।

100. **होछे जो मिलदा गोछा, सेंह लाये कि दस्से।**
ओछे को अंगोछा मिला, वह पहने या दिखाए ।

—दुर्गा भागवत

भारतीय साहित्य में सुभाषित तथा सूक्ति शब्दों के प्रयोग कहावतों के अर्थ में हुए हैं । संस्कृत मे इसके लिए लोकोक्ति शब्द भी प्रयुक्त किया जाता रहा है ।

आकाशवाणी, शिमला।

कांगड़ा क्षेत्र

लोकोक्तियाँ तथा पहेलियाँ

—सुदंशन डोगरा

कांगड़ी साहित्य में बुझारतों का बड़ा महत्व है। यहां अति प्राचीन काल से बुझारतों का प्रचलन रहा है। प्राचीन समय में भी गांव के लोग सायंकाल आपस में जब मिलजुल कर बैठते थे तब वे बुझारतों द्वारा अपना मनोरंजन किया करते थे। बुझारतें केवल मनोरंजन का ही साधन मात्र नहीं है अपितु इन के द्वारा एक प्रकार की दिमाग की कसरत तथा बौद्धिक विकास भी होता है। बच्चों का मन शरारत से हटाने का यह एक बड़ा सरस और सुगम उपाय है। विद्युत युग की देन के कारण अब रेडियो आदि में बच्चों की तथा बड़ों की उत्सुकता बढ़ती जा रही है और पहेलियों का प्रचलन प्रायः घटता जा रहा है किन्तु आज भी वे भोले ग्रामीण इन्हें नहीं भूले हैं जिन के पास मनोरंजन के नवीन साधन नहीं हैं। अब, और आज भी यह फोहलणियां (बुझारतें) भोले भाले ग्रामीणों का जाड़े की लम्बी रातों में खूब मनोरंजन करती हुई अपने अमरत्व को प्राप्त हैं—

इस क्षेत्र की कुछ एक पहेलियां यहां प्रस्तुत की जा रही हैं।

पहेलियां	अर्थ
(1) अम्बे डाले कुर कुरे, तुणियां पिया रस, मेरी फोहलणी बुझणी तां बुझ, नहीं तां रुपैइये कड दस।	आम की टहनियां नाजुक सी, तुहनी के पेड़ की तरह रस भरी भी हैं यदि मेरी बुझारत का उत्तर दे सकते हो तो दो, वरन् दस रुपये निकालो।
(2) इतणा की गिटणु गिट मिट करदा हसन कराड़ियां तां जली-जली मरदा।	छोटा सा छोकरा, सजधज कर रहता है पर पास की युवतियां जब हंसती हैं तो वह जलता है।
(3) ईचक मीचक हिरण दी चाल न तित पूछ तां न तित बाल।	उछल कूद ऐसे करता है जैसे हिरण हो परन्तु वह हिरण नहीं है क्योंकि न उसकी पूंछ है न उसके बाल हैं।
(4) उटक पिद्दू, लाह गिद्दू।	छोटे पक्षी की तरह फुदक कर दूसरी जगह चला जाता है।
(5) (क) एह आई ओह गई।	इधर से आई और उधर को चली गई।
(5) (ख) ऐसी फोहलणी पां, जे तेरे नक्के चक्की खां।	ऐसी बुझारत डालूं कि तुम्हारा नाक काट खाऊं।
(6) ओंदियां ने ओंदा, कने जांदियां ने जांदा।	(6) आने वालों के साथ आता है और जाने वालों के साथ चला जाता है।
(7) ओछा लंमा बिन्ना, अग्गी जले न पाणियें सिन्ना।	(7) लम्बा छोटा आसन है जो न आग से जल सकता है, न पानी से ही भीगता है।
(8) कटोरे पर कटोरा, पुत्र बुड़े ते भी गोरा।	कटोरे पर कटोरा है, बेटा बाप से भी गोरा है।

पहेलियां	अर्थ
(9) काला हंडू लाल भत, सणें हंडुएं गड़प।	काले रंग की हांडी में लाल रंग का भात पका है। हांडी के साथ ही उसे निगल लिया जाता है।
(10) छिरी-छिरी छींडकी छे जंघां इक लींडकी।	पतली सी छड़ी के साथ छः टांगें और एक पूंछ चल रही है।
(11) टह-टह करदी चानणी मड़ाकियां मारे डोई, सत जणे खाणा बैठे रज्जा नी कोई।	चमकती हुई चांदनी है। एक लम्बी सी छड़ी झटक रही है। सात आदमी खाना खाने बैठे हैं किन्तु किसी का भी पेट नहीं भरता है।
(12) तू चल मैं आंधा।	तुम चलो मैं आया।
(13) धरत पटैंजू-धरत पटैंजू तिन टुंडिया दस पैर चलैंजू।	धरती को उखाड़ते हुए तीन सिर, और दस पांव चले जा रहे हैं।
(14) पारे ते आई म्हैं गड़ांदी, बाझी दंदां माहणुआं खांदी।	दूर से रेंगती हुई भैंस आ रही है जो बिना दांतों के ही मनुष्यों को खाने की क्षमता रखती है।
(15) पारे ते आई कराड़ी, दो चदरां ओढ़ियां भिरी पिठ घुआड़ी।	दूर से युवती आई है उसने दो चादरें ओढ़ रखी हैं, परन्तु फिर भी उसकी पीठ नंगी है।
(16) पहलैं जम्मी मैं कुड़ी पिच्छैं जम्मियां बाबा, चाणचक्कैं अम्मा जम्मी फाहलड़ुए च दादा।	पहले 'मेरु' कन्या जन्म पड़ी, फिर पिता का जन्म हुआ अचानक ही माता अवतरित हुई और सबके बाद दादा जी उत्पन्न हुए जो अभी तक पोतड़ों में ही हैं।
(17) बणैं बधी बणे च टुकी, बणे च कित्ते हार सिंगार बारा बरीहां जले च कटियां भिरी दिखे नी घर बार।	जंगल में काटा गया, जंगल में ही शृंगार हुए, और बारह वर्षों तक जल में रहना पड़ा और दोबारा घर आना ही न हुआ।
(18) बाहे तिल, लुंगे झिल्ल, फुलियां बाहुलीं, लगे बिल।	तिल के समान बीज बोये, कांटेदार झाड़ियां उगीं, नीले फूल लगे और बिल के समान फल लगे।
(19) चीरूआं पत्त घमीरूआं दाणा, मेरिया फोहलणियां, ना बुझे तिसदा बब्ब लबाणा।	चीरे हुए पत्ते और गोल गोल दाने। जो मेरी बुझारत का उत्तर न दे सका उसका पिता लबाणा जाति का होगा। द्वितीय पंक्ति केवल तुक मिलाने के लिये लिखी गई है।
(20) भूरियां जंघां, भूरे तले, राती घुमदे दाढ़ी जले।	भूरे रंग की टांगें हैं तथा भूरे रंग के पट हैं और वे दाढ़ीजार रात को ही घूमा करते हैं।
(21) मा जम्मी नी पुत बौहड़ी चढ़ेया।	माता पैदा ही नहीं हुई और पुत्र ऊपर की मंजिल पर चढ़ बैठा है।
(22) मेरे मामे दा साफा, सैह लाई लाई नी मुकदा।	मेरे मामे की पगड़ी इतनी लम्बी है कि वह पहन कर भी खत्म नहीं होती।
(23) राजे दे नक्कें धागा, सैह खींजिया कने राजा रींगिया।	राजा के नाक में धागा फंसा है, यदि उसे खींचा जाए तो वह शब्द करता है।
(24) सिंह गरणाए हाथी कम्बे, राजे दा बेटा पाणी मंगे।	शेर गरज रहे हैं, हाथी कांप रहे हैं और राजा का पुत्र पानी मांग रहा है।

पहेलियां	अर्थ
(25) सुरग बज्जी ढोलकी, पताल लग्गा ब्याह, पुछ अपणे जबरे जो बाझी बीये क्या?	स्वर्ग में ढोलकी बज रही है, पताल में शादी हो रही है और बिना बीजों के कोई वस्तु उग रही है, अपने पिता से पूछो बिना बीजों के क्या हो सकता है।
(26) तुंग बेबे तुंग, बाझी पाणिये रिन्हे मुंग। बाझी चरखे कतिया सूत, बाझी खसमें जणिया पूत।	तुंग बेबे बिना पानी के मूंग के दाने पक गए हैं। बिना चरखे के सूत काता गया है, बिना पति के युवती ने पुत्र उत्पन्न किया है।
(27) बिन हडिये सैह आए, बिन सिरिया सैह कुण? जिन्हा दे ढाई ढाई गज लमें नक। तैं किहियों बुझिया? बरसो दै मोहियों पाई हक।	इस पहेली में तीन अर्थ है। दो प्राणी आपस में बातचीत कर रहे हैं:— पहला प्राणी पूछता है, "बिना हड्डी के जीव, वे आये हैं।" है। दूसरा प्राणी जो कि बिना सिर के है पूछता है वे कौन हैं? बिना हड्डी के प्राणी उत्तर देता है कि "वे आए हैं जिन के अढ़ाई गज लम्बी नाक होती है।" फिर बिना सिर का प्राणी प्रश्न करता है कि "तुझे उनके आने का कैसे पता चला"? तब फिर उत्तर मिलता है—एक वर्ष के मरे हुए भैंस के बच्चे की बनी खाल के नगाड़े पर चोट पड़ी थी। अर्थात् हाथियों पर चढ़ कर राजा की सवारी आ रही है और नगाड़ा इस बात की सूचना दे रहा है।

उत्तर

(1) जलेबी, (2) तम्बाकू पीने वाली चिलम का चुगल, (3) पिस्सू, (4) गेंद, (5) (क) नज़र या दृष्टि, (ख) मिर्च, (6) परछाईं, (7) प्रतिबिम्ब या छाया, (8) नारियल, (9) अंजीर (एक प्रकार का फल) (10) बैल, जंगल और किसान (11) हुक्का, (12) मनुष्य की परछाईं, (13) हल, दो बैल तथा एक किसान, (14) बन्दूक, (15) तितली, (16) अरबी, (17) किश्ती या नौका, (18) बैंगन, (19) धनिया, (20) चूहे, (22) रास्ता, (23) चरखा, (24) घराट, (25) कुकरमुत्ता, (26) जंगली फल (ख) जाल, (ग) टटमोर, कुकरमुत्ता, (27) (1) जोंक, (2) केकड़ा, (3) हाथ, (4) नगाड़ा।

लोकोक्तियां

दिती खल न खाए, कने
कोहलू चटण जाए।

दी हुई वस्तु को न लेना और बाद में उसे ढूंढने जाना।

सूर खाए कमांदिया,
कट्टुए दा मुंह जकिए।

इस लोकोक्ति का अर्थ तुलसी की चौपाई के अधिक निकट है। यथा "और करे अपराध कोई और पाव फल भोग"। अर्थात् अपराध कोई करता है और दण्ड किसी अन्य को मिलता है।

खाणें पीणे जो बांदरी,
कनें डंडियां खाणे जो रिछ।

खाने पीने के समय पर बन्दरी सब कुछ खा जाती है, डंडे रीछ पर पड़ते हैं। अर्थात् मौज मस्ती में कुछ और मित्र होते हैं और कठिन समय में कुछ और मित्र होते हैं। कठिन समय पर किसी अन्य को पुकारा जाता है।

जिन्हा खाणियां सासन भटियां,
तिन्हां जाणा मारूए देस।

जिन्होंने सुख के समय में दावतें खाई हैं, मुसीबत में भी व ही साथ देंगे।

कांणिया कां पियारा,
राणियां रा पियारा।

मादा कव्वे को नर कौआ प्यारा लगता है तथा रानी को राजा प्यारा लगता है, अर्थात् अपनी-अपनी सृष्टि सभी को प्यारी लगती है।

ऊंटा बे वियाह कने,
गधे परोहत॥

मूर्खों के परामर्शदाता भी मूर्ख होते हैं।

अन्हीं देवी नगटे पजियारी।

अंधी देवी और निर्लज पुजारी। अर्थात् चारों ओर अंधेर का राज्य।

सूत न कपाह कने जुलाहे ने लठम लट्ठा॥

कारण उत्पन्न होने से पहिले ही बात को बढ़ाना या अकारण ही झगड़ा करना।

चोरां दा कपड़ा कने डांगां दे गज।

मुफ़्त के माल का बेरहमी से उपयोग किया जाता है।

कुछ नीतिपरक लोकोक्तियां

दुध कढवा खरा, मुंडु पढ़वा खरा।

दूध काढ़ने पर स्वादिष्ट होता है और लड़का पढ़-लिख कर अच्छा बनता है।

सुरे बाझी राग नी, कोई गाई दिखो,
लूणे बाझी सुआद नी, कोई खाई दिखो,
माऊ बाझी चा नी, कोई जाई दिखो ॥

स्वर के बिना गीत नहीं सुहाता चाहे कोई गा कर देख ले । नमक के बिना कोई भी व्यंजन स्वाद नहीं लगता, चाहे कोई कितना भी क्यों न खाए । माता के बिना कोई चाव नहीं करता अर्थात् हृदय से प्रसन्न नहीं होता जितनी कि मां होती है । अर्थात् स्वर से राग, नमक से स्वाद तथा मां से आदर मिलता है ।

रीसें हुंदें रागें जांदे ॥

दूसरे के अनुकरण से मनुष्य उन्नति करता है तथा काम-काम की कोरी रट लगाने से नष्ट होता है ।

भुखा बुसदा खाई लियां,
रजिया बुसदा डकारी लियां ।

भूखा सदैव खाने की ही इच्छा रखता है और जिसका पेट भरा होता है वह डकार द्वारा दूसरों को अपने भरे हुए पेट का प्रमाण देने में संलग्न रहता है । अर्थात् निर्धन के सामने धनी व्यक्ति का डींग मारना उसकी भूख को बढ़ाना है ।

भुख नी तोपदी नियोड़ा,
कनें निन्द्र नी तोपदी बछाण ॥

भूखा व्यक्ति सब्जी के स्वाद की कभी परवाह नहीं करता और उनींदा व्यक्ति बिस्तर नहीं ढूंढता । अर्थात् भूख में भाजी और नींद में बिस्तर की परवाह नहीं की जाती ।

भुखा नी लाणा परोहिणे
कने, रजिया नी लाणा रसोई ॥

भूखे व्यक्ति को कभी भी परोसने का काम नहीं सौंपना चाहिए क्योंकि वह सब को खूब परोसेगा और भोजन जूठा रह जाएगा । उस व्यक्ति को कभी रसोई बनाने का काम नहीं सौंपना चाहिए जिसका पेट भरा हो । क्योंकि भरे पेट के कारण वह अनमना हो कर रसोई बनाएगा और वह स्वादिष्ट नहीं बन पाएगी ।

दूर जुआंई फुल्ले साही,
पार जुआंई अधा ।
घर जुआंई गधे बराबर,
जां जिऊ बोले लद्दा ॥

यह लोकोक्ति जंवाई के विषय में अत्यन्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करती है कि दूर रहने वाला जंवाई फूलों के समान नाज़ुक समझा जाता है । समीप रहने वाले जंवाई का मान दूर के जंवाई से आधा होता है तथा घर जंवाई को तो गधे के समान समझा जाता है, जब जी चाहे तभी अपनी इच्छा अनुसार काम ले सकते हैं ।

जिन्हा बैंसां उकलना तिन्हा दे ढेरे मानू पौणे ।

जिन बांसों के पेड़ नष्ट होने पर आ जाते हैं उनके 'मानू' (नए पौधे) भी टेढ़े उगते हैं । अर्थात् नष्ट होने के आसार पहले ही दृष्टिगोचर होने लग जाते हैं ।

सोमसी

जिन्हा दियां पेहृयां दाणे,
तिन्हां दे जल्हे भी सियाणे ॥

जिनके पास धन होता है उनकी सन्तान गुणहीन होने पर भी गुणी समझी जाती है ।

बाही हुक्का, अणधोता मुंह,
कमज़ोर पुत्र, कने कपत्ती नुंह,
इन्हा चौहीं दा फिटं मुंह ॥

बासी हुक्का अर्थात् ऐसा हुक्का जिसमें प्रातः उठ कर ताज़ा पानी न डाला गया हो, बिना धोया मुख, दुर्बल पुत्र जिसमें किसी प्रकार का बल न हो और दुराचारिणी वधु, ये चारों वस्तुएं दुर्भाग्य से व्यक्ति को प्राप्त होती हैं और इन चारों को धिक्कार है ।

घरा अग्गे घाटी, घाए जो जाणा तां खुन्नी दराटी,
घरें ओणा तां रंड घलाटी, जिसदें एह तिन,
सेंह बड़ा पापी ॥

बहुत ऊंचे टोले पर जिसका घर हो और थक कर जिसे चढ़ाई चढ़नी पड़ती हो, घास काटते समय दरान्ती भी तेज़ न हो और घर में कलह करने वाली स्त्री हो, ऐसा पुरुष बहुत अभागा समझना चाहिए और यह उसके पूर्व जन्म के पापों का फल ही हो सकता है ।

जमीन मिल्ली कंकरी, जणास मिली कंसणी,
बल्द मिले डबोक, पणते दे भुली गै सलोक ॥

चाहे कोई कितना भी विद्वान क्यों न हो परन्तु परिस्थितियां उसकी विद्वता को आच्छादित कर देती हैं, जिस को भूमि पथरीली प्राप्त हो, स्त्री कलहकारणी हो, बैल निकम्मे हों तो भला वह पंडित अपनी विद्वता कहां तक बनाए रखेगा ?

मारिये जब्बर, जे रज्जे टब्बर ॥

यदि कोई शिकार ही करना है तो इतना करो कि सारे परिवार का पेट भर जाए ।

जूठा खाणा मिट्ठे कारण ॥

जूठ किसी लालच के लिए ही खाई जाती है । अर्थात् दुष्कर्म भी किसी प्रलोभन को सामने रख कर किया जाता है ।

नौ मण खिओ पहियां, सौ मण ननिहाल,
अपने घरें नी होए तां चोहीं पासियां काल ॥

अपने सगे सम्बन्धियों के घर में चाहे कितना भी धन क्यों न हो पर यदि अपने घर में कुछ न हो तो कोई नहीं देता, तब चारों दिशाओं में अकाल ही दिखाई पड़ता है ।

ताऊआं चाचियां भरेयां ग्रां,
पाणी पीणा कुसदे जां ।।

पीहर में यदि मां बाप मर जाएं तो अन्य सम्बन्धी पानी के लिए भी नहीं पूछते । अर्थात् दुनिया धन-वैभव से परिपूर्ण है परन्तु निर्धन को कोई नहीं पूछता ।

सजणां जो सज्जण मिल्ले,
गलें पाइयां बाहीं,
तुसां बला खंधोले तां हन,
म्हारे सैह भी नाहीं ।।

निर्धन मित्र एक दूसरे से मिले, एक ने गूदड़ी ओढ़ रखी थी इस लिए वह लज्जा अनुभव करने लगा । परन्तु दूसरा मित्र कहता है, "भैया तुम्हारे पास गूदड़ी तो है, हमारे पास वह भी नहीं है । अर्थात् संसार में एक दूसरे से बढ़-चढ़ कर दुखी हैं ।"

टुट्टियो नी गठिए कने रुस्सियो नी मनाइये,
तां पूरे नी पौंदे ।।

फटी हुई वस्तु को पुनः सिला न जाए और रुठे हुए व्यक्ति को मनाया न जाये तो कभी निर्वाह नहीं हो सकता ।

घर घर हंडदी नार बुरी, दुखड़ा सणांदी रो,
मान घटांदी अपणा, दुःख नी वंडदा को ।

जो स्त्री घर-घर जाकर अपना दुखड़ा रोती है इस बात से उसका मान तो घट जाता है परन्तु दुःख को कोई नहीं बंटा पाता । यह लोकोक्ति रहीम के दोहे के अधिक निकट है ।

लज्ज लजांदी अंदर बड़ी, नक वढ्दी बोली मेते डरी ।।

बुद्धिमान व्यक्ति लज्जा के मारे घर मे घुस जाता है और निलर्ज समझता है कि यह मुझ से डर रहा है ।

सौकण खरी, सकौंडा बुरा,
कुहाड़ी खरी, डौंडा बुरा ।।

सौत इतनी भंयकर नहीं समझी जाती जितना कि उसका पुत्र । क्योंकि समय पा कर सौत के मर जाने पर भी चैन मिल सकती है पर यदि उसका पुत्र जीवित हुआ तो आयु भर दुःख देगा । इसी प्रकार कुल्हाड़ी तब तक कुछ नहीं कर सकती जब तक उसका डंडा न लगा हो ।

खुह खुणदेयां जो खाई ।।

जो दूसरों को गढा खोदता है वह स्वयं भी उसी में गिर जाता है । 'बुरा न चेते और को, है यह है शिक्षा सारी ।'

—सैट नं0 3, बुशहर हाऊस,
राम बाजार, शिमला ।

हमीरपुर की लोकोक्तियाँ तथा मुहावरे

—डा0 आत्मा राम

1. खतरी कने बकरी कुम्बला जो पौंदे ।
खतरी और बकरी दोनों अपने लाभ के लिए बहुत दूरदर्शी होते हैं । कम परिश्रम से कैसे अधिक से अधिक लाभ हो, वे यह सोच समझ कर कार्य करते हैं ।

2. मन्त्र नीं औंदा किरले दा कने सरपे बिया डुड्डी च हत्थ पांदा ।
कुछ न जानते हुए भी खतरनाक कार्य करने लग पड़ना ।

3. कुब्बे जो पिया लत्ता दा कने कुब्बे दा कुब्ब सिद्धा होई गिया ।
जो किसी का बुरा करने के लिए किया था, उस से उसे और लाभ हुआ ।

4. बांदरां दे कन्नें च बालियां ।
अयोग्य व्यक्ति को आभूषण बेकार हैं ।

5. छालीं दित्ते नी दरिया लंघोंदे ।
जल्दी करने से बड़े कार्य नहीं होते ।

6. कमाणे जो तापूदे, खाणे जो मुंह बाकूदे ।
खाने को तैयार, काम करने को बीमार ।

7. नाइया केडे केडे? मुंहां गेडे ।
पूछना क्या, सब कुछ सामने आ जाएगा ।

8. सिरा ते गंजा कने नां जुलफी ।
गुणों के विपरीत नाम ।

9. कुआरा चलेया कड़माइया, अपणिया करे कि पराईया ।
जो अपना कार्य न करवा सका, दूसरों के क्या करवाएगा ।

10. डक्का तोड़ना नी, हुक्म मोड़ना नी, लंगर छोड़ना नीं ।
कार्य करना नहीं, भोजन छोड़ना नहीं, केवल 'हां हां' करके टालना । कार्य करने से बिल्कुल इनकार भी नहीं करना ।

11. जलदे घरे दी बग्गड़ बौंकरी ही सही ।
जो कुछ न दे, उससे जो कुछ मिल गया वही भला ।

12. घरो धियाड़ेया मिल भाड़ेया ।
केवल भोजन की प्रतीक्षा करना, कार्य न करना ।

13. खाणे जो जुड़दा नीं, कने नां क्या जे भत्त खाऊ ।
गुणों के विपरीत नाम होना ।

14. पिछ बसे नीं, उच्चका पहले ।
शुरू में ही बुरे कार्य करना आरम्भ कर देना ।

15. खांदेया खाण न मंजिया बाण ।
कुछ भी पास न होना ।

16. सूत नी पत्त नी, जुलाहे ने ठौंग मठौंगा ।
बिन कारण से लड़ना झगड़ना ।

17. ननदा दा नणदोइया सेंह बी मेरा ढमक ढोइया ।
अर्थात् सभी मुझे तंग करते हैं ।

18. राहे जांदिये बलाई, तू मेरे घरे च औइयां ।
आ बैल मुझे मार ।

19. धीए धमधड़े, नूंएं तू कन्न कर ।
बोलना लड़की को, सुनाना बहू को ।

20. हत्थे बिच्च टुकड़ा, पिट्टी विच मुकड़ा ।
इधर लाभ, उधर हानि करना ।

21. अप्पूं तां चल्ली, पिछे देयां छोरुआं भी लई चल्ली ।
स्वयं बिगड़े, औरों को भी बिगाड़ दिया ।

22. उठी न सकेई, फिटे मुंह गोडियां दा ।
नाच न जाने आंगन टेढ़ा ।

23. आप कुक्कल बेहड़े ।
किसी बड़े व्यक्ति के साथ छोटों का भी उसकी तरह ही अभिमान करना शुरू कर देना ।

24. ऊंट त कुद्दे पर बोरे बी कुद्दे ।
किसी बड़े व्यक्ति के साथ छोटों का भी उसकी तरह ही अभिमान करना शुरु कर देना ।

25. खाण पीण नू कबही ? दो सजरियां इक बेई,
कम कमाण नू कबई, घर-घर हिलदी, मेरी बेही ।
कार्य करने को पीछे, खाने को आगे ।

26. तड़िग बड़िग लकड़ी, चुरासी पांदी डोर,
भावो चली इए, उड़ावे मोर ।
बुरे व्यक्ति दुःख ही देते हैं ।

27. गल्लां बातां मं बाड़ी, करतूती मेरे बेबे ।
केवल बातें करने में कुशल होना ।

28. घर खाणे जो नी जुड़दा, अम्मा पीहणा गईयो ।
हाल बेहाल होना ।

29. मिलदा नी साग सत्तू, बणाइया मदरा ।
निर्धन महंगी चीज़ कहां खा सकते हैं ।

30. घर नीं गा बच्छी, तां निद पौए अच्छी ।
जिस के पास कुछ नहीं, वह ही सुखी रहता है ।

31. चज्जे चारे हारी जायां, गल्लां ते बिल्ले हारदो ।
कार्य-कुशलता में हार भी जाए, बातों में न हारना ।

32. संहड़ अपणियां मींगणां ते बतरेंदा ।
अपने पाप स्वयं को डराते हैं ।

33. पहले पेट पूजा, फेरी काम दूजा ।
खाने का कार्य सब से पहले ।

34. मरी गई सेह बोटण, सेंह जे अप्पी खाए अप्पी सराहे ।
अपने कार्य की स्वयं प्रशंसा करना ।

35. लींडू बल्द, बारह ब्याधीं ।
सदा रोगी रहना ।

36. धपड़ा ते मचूच बु ो।
धमकाने से अधिक डर लगता है।

37. राह पया जाणे, कनें वाह पया जाणे।
साथ रहने तथा कार्य करने से व्यक्ति के गुण-दोषों का पता चलता है।

38. कतिए पिंजिए करियो स्यो, तां घूघा राणा घघरी देओ।
परिश्रम का ही फल मिलता है।

39. सौकणी दे भाण्डे च मता ई सुझदा।
दूसरे की चीज अधिक ही दिखाई देती है।

40. एह मुंह कनें मसरां दी दाल।
अमूक व्यक्ति अमुक कार्य नहीं कर सकता।

41. पहलें मामेयां दे मुंह धोई आयां।
यह काम नहीं हो सकता।

42. जवां नी आण, बौड़ी बछाण।
कठिन समस्या सामने है।

43. कणक खेता ची पेटा, आ जुआइयां मंडे खाह।
उपयुक्त समय से पहले ही कार्य करना।

44. आमले दा खादेया, स्याणेया दा ग्लाया, पिच्छे ते सुआद आंदा।
पूर्वजों का उपदेश अन्त में अच्छा, लाभदायक लगता है।

45. लैह जे करदेयां ने ना करें, तिदा भी लंगां जलें।
बुरे का बुरा करना ही लाभदायक होता है।

46. न सद्दी न बुलाई, में लाड़े दी ताई।
बिना बुलाए आना तथा अपने आप को बड़ा समझना।

47. रस्सी जल ी गई, पर वाट नीं गई।
अक्कड़ रखना।

48. आई जंज, बिन्नो कुड़ी दे कन्न।
समय आ जाने पर ही कार्य करने की याद आना।

49. जेहड़ी मां, तेहड़ी पूंगड़ी, जेहड़ी बेल, तेहड़ी तूंबड़ी।
जैसी मां, वैसी बेटी,
जैसी बेल, वैसा फल।

50. जितना गुड़ पाणा, तितना ई मिट्ठा होणा।
जैसा दाम, वैसा काम।

51. अपणिया छाही जो कोई खट्टा ो ेलदा।
अपणिया सिंह, बगानियां गिदड़।

52. कुसी दा सराहद पड़ी देणा।
किसी के विषय में बुरा कहना।

53. गाई दा मन बछड़े खा, बछड़े दा मन जाड़ें फाटें।
मां बाप को बच्चों का ख्याल, पर बच्चों का ध्यान इधर-उधर।

54. औए नो मुंहें, लें नूहें।
जब कोई वस्तु स्वयं को अच्छी न लगे तो औरों को देना।

कुत्ते जो खीर नी पचदी।
ओच्छा व्यक्ति अच्छी चीज को पचा नहीं सकता।

56. होच्छे जो मिलया गोच्छा, तिनी तीणी तीणी ने तोड़ीता।
छोटे व्यक्ति किसी लाभ का रसास्वादन नहीं कर सकते।

57. डब्बी ने वाह, रज्जी ` खाह।
खूब परिश्रम करो, खूब खाओ पिओ।

59. सुत्तेया कने मरेया बराबर होंदा।
सोया तथा मरा व्यक्ति एक समान है।

59. कन्हां पर जुंगड़ा, घरा जो हक्कां।
सामने वस्तु, इधर-उधर तलाश करना।

60. मां बुढ़ेयां दीयां गालीं, ध्योआ दिया नालो।
मां बाप को गाली देना भी लाभकारी होता है।

61. ग्लाणे दियां गल्लां, छु ई दियां हल्लां।
कहने या बातें करने से कुछ नहीं होता।

62. घरा वा जोगी जोगड़ा, बाहर वा जोगी सिद्ध।
अपने व्यक्ति का मान कम होता है।

63. अपणा मारगा भी, तांवी छौइयां ई सटणा।
अपना व्यक्ति बहुत दुःख नहीं देता।

64. गोहा जो मिली गोह, देया ओह, बेया ओह ।
एक जैसे व्यक्ति मिल जाना।

65. औधा ई ऊत है।
सारा कार्य ही खराब है।

66. नक्के चलेया सीम, बोलदा ब्याहणी भीम ।
कार्य कुशलता कुछ नहीं, आशा बहुत ऊंची रखना ।

—हिमाचल विश्वविद्यालय,
शिमला–5

कहावतों का अजब भंडार हमारे चारों ओर बिखरा पड़ा है और किसी भी स्थान के कहावत साहित्य का लेखा-जोखा लेने के लिए जीवन-व्यापी श्रम और साधना की आवश्यकता है।

—कृष्णानन्द गुप्त
(बुंदेली कहावत कोश)

सोमसी

कहलूर जनपद के मुहावरे

—सरोज शर्मा

लोक साहित्य की अनेक विधाओं ने शिष्ट साहित्य को महत्वपूर्ण देन दी है। यदि यह कहा जाए कि शिष्ट साहित्य की जड़ें 'लोक' में प्रचलित परम्पराओं में खोजी जा सकती हैं तो अत्युक्ति न होगी। सामान्यतया लोक मानस अपनी अभिव्यक्ति विस्तार के साथ करना चाहता है परन्तु कुछ व्यवहार सम्बन्धी बातों को संक्षेप में कहा जाना अधिक सारगर्भित होता है। डा0 सत्यन्द्र ने इस प्रकार के लोक-साहित्यिक अंग को 'मुक्तक' कहा है, वे पहेलियां, लोकोक्तियां तथा कहावतों को मुक्तक साहित्य के अन्तर्गत रखते हैं।

लोक व्यवहार के अनुसार कहावतों के कितने ही रूप हो सकते हैं। इनके द्वारा हास-परिहास, बौद्धिक-चातुर्य, उपहास, खिलवाड़, कटाक्ष, प्रशंसा, व्याज-स्तुति, जाति-वर्णन आदि बातें झलकती हैं। सामाजिक मनोवृत्ति के दर्शन में कहावत से गम्भीर उक्ति ढूंढना कठिन है। ये लोगों के अनुभव कोश का काम करती हैं। कहावत के पोषण अर्थात् सुधार या पुष्टि विषयक, शिक्षण विषयक, आलोचना विषयक तथा सूचना विषयक भेद-उपभेद किए जा सकते हैं। लोकोक्ति मुहावरे का ही एक अंग है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि मुहावरे सामाजिक चिन्तनधारा का दर्पण हैं और उनके माध्यम से किसी समाज में प्रचलित अच्छी-बुरी प्रथाओं, हंसी मज़ाक के प्रकरणों, शब्द, भोजन, आपसी सम्बन्धों तथा जाति-विषयक बातों को भली प्रकार समझा जा सकता है। बिलासपुर क्षेत्र की लोकोक्तियां इस विषय में द्रष्टव्य हैं :–

1. अप्पू ता रख पर दूजे जो बी डोरी नीं बज्जो।
अपने आप तो किसी वस्तु से वंचित पर दूसरों को भी लाभ न हो। यह कहावत मनोवृत्ति-दर्शक है।

2. अप्पू मरे खखासणा, ठुठा मंगो तेल।
अपने लिए खाने को भोजन नहीं, भिक्षा का पात्र तेल की इच्छा कर रहा है। अर्थात् एक वस्तु जो अत्यन्त आवश्यक है, का अभाव है परन्तु जो बात आवश्यक नहीं है उसकी मांग पहली से भी अधिक प्रतीत होती है। इसी प्रकार की एक अन्य उक्ति–

3. छोहरू रोहें छाही जो, कनें बुढ़िया री इच्छक पनीरा जो।
अर्थात् लड़के तो लस्सी के लिए तरस रहे हैं पर बुढ़िया पनीर बनाना चाहती है। अर्थात् जो बात आवश्यक है, उसकी ओर तो ध्यान नहीं, परन्तु अनावश्यक बातों की ओर इच्छाएं दौड़ाई जा रही हैं।

4. गाई रा मन बछुए खा, बछुए रा मन बणे काटें।
यह उक्ति तब कही जाती है जब वांछित मनुष्य का ध्यान इधर-उधर हो और वक्ता उसे अपनी ओर आकर्षित

करना चाहता हो । अर्थ हु– गाय का मन बछड़े की ओर और बछड़े का मन जंगल-चरागाह की ओर ।

5. जम्मे पुत सलक्खणे कन्धां ढंह पइयां,
आइयां मंगल गौणे, रोणे ढंह पइयां ॥

नालायक पुत्रों के लिए कही जाने वाली उक्ति है । इसका अर्थ है कि अच्छे लक्षणों वाले पुत्र (व्यंग्यात्मक) पैदा हुए कि उनके जन्म लेते ही दीवारें गिर गई और जो स्त्रियां मंगलगीत गाने के लिए आई थीं वे भी रोने लग गईं ।

6. तहवुओं तिका जो जे बरता रे भाण्डे भत्त,
तहवुआं तिक नौहीं गत्त ।

जब कोई व्यक्ति भविष्य की परवाह न करके अपने पास की वस्तु को खर्च करता चला जाए तब यह उक्ति कही जाती है । इसका अर्थ है ठठेरे (सूप आदि बनाने वाली जाति-बरड़) के बर्तन में जब तक भात है, तब तक वह चैन नहीं लेगा ।

7. होच्छे जो भिलया गोच्छा, तिने तोड़ी दित्या पहेरी ने ही ।

ओछे व्यक्ति भी अजीब होते हैं । अपनी चीज़ों का अनावश्यक प्रदर्शन करते रहते हैं । अर्थ है: ओछे को कहीं से अंगोछा मिल गया उसने उसे [redacted] कस कर ही तोड़ दिया ।

8. गोहा जो मिली गोह, तेहड़ी ही ओह तेहड़ी ही ओह ।

एक ही थैली के चट्टे बट्टे । गोह के साथ यदि गोह मिल जाय तो दोनों की अच्छी निभ जाती है । जब दोनों मित्र एक जैसे हो जाएं, तब कहा जाता है ।

9. लेण्डू बलद, सौ बिमारी ।

अर्थात् दुम कटे बैल को सौ बिमारियां लग जाती हैं । जब बुरे दिन आते हैं तो आपत्तियों के पहाड़ गिरते हैं ।

10. बहुए घर बार तेरा पर छिक्के हत्थ देर्ना लान्दी ।

जब किसी को कहा जाए कि वह घर का ही व्यक्ति है पर साथ ही घर की वस्तुओं को छूने की मनाही भी हो ।

11. इक ब्याड़ा सस्ता रा इक बहुआ रा ।

सभी का अपना अनुकूल समय होता है । तथा–

12. सौ सन्यारा री इक लुहारा री ।

सुनार सौ मारेगा पर लुहार की बारी आने पर एक ही काफी है ।

13. हासदियां बी प्रौहुणा, रोन्दिया बी परौहुणा ।

मेहमान तो ठहरेगा ही, चाहे रोएं चाहे हंसें । अतः रोकर क्यों मेहमान को ठहराया जाय ।

14. गोह कोही पलाहें, उतरहगी नब्बां माहें ।

गोह पलाश के वृक्ष पर चढ़ने पर अपने समय को अनूकूल देखकर ही उतरेगी, चालाक व्यक्ति द्वारा लाभ उठा`की स्थिति में कहा जाता है ।

15. चमार गया पवार तिसजो उत्थी बी बगार ।

किसी के कहीं पहुंचते ही काम पर लगा दिया जाना ।

16. चन्दरे रे पन्दरा, भोले रे सोला ।

चालाक व्यक्ति के गिन कर पन्द्रह हुए परन्तु भोले व्यक्ति के सोलह हो गए । भगवान चालाकों की मदद नहीं करता ।

17. होरी जो होर क` बूड़िया जो कन्ना री ।

बहरे को अपने कान की बात ही याद आती है, बाकी चाहे कुछ बोलते रहें ।

18. रागें भुली डूमणी गोए आल बताल ।

जब कोई व्यक्ति अपने काम में भूल करे और हार न माने तब कहा जाता है ।

19. जिसरे हत्था डोई, तिसरा सब कोई ।

जिसके हाथ में कड़छी है, सब लोग उसी के हो जाते हैं ।

20. तिसजे गुड़ खाणा तिस ही कन्न बन्हयाणा ।

जिस ने गुड़ खाना है, वही कान बिन्धवाने की पीड़ा सहेगा । इसी प्रकार की एक अन्य उक्ति है —

21. तिसजे खाणी सासण भटियां तिसही देखणा मारू देस ।

जिस ने मुफ्त का धन, यश लेना है, वही मारूदेस (मारवाड़) में जाएगा । यह उक्ति लखू लाल की कथा का अंश है । लखू लाल एक लाख रुपये राजा से वेतन के रूप में लेता था परन्तु काम कुछ नहीं करता था । जब कुछ दिनों के बाद मारवाड़ में एक राक्षस के आ जाने का समाचार आया तो सब ने ऊपरलिखित उक्ति कह कर लखू लाल को राक्षस मारने के लिए भिजवाया ।

22. न गुड़ खाणा न कन्न बन्हयाणा ।

न तो लाभ लेना है, न कष्ट उठाना है ।

23. रहणा वी भुइयां, खाणे वी पक्के।

रहना भी जमीन पर, वृक्ष पर चढ़ने का कष्ट न करना पर खाने के लिए पक्के फल चाहियें। अर्थात् बिना कष्ट के ही लाभ उठाने की ताक में रहना।

24. अम्मां तिसा डालिया जे हंऊ बैठां हां, सै लह्की लह्की पौंही।

अपने आप को शक्तिशाली समझने की भूल करना। सन्दर्भ है कि किसी पक्षी ने अपनी मां से कहा—मां मैं जिस डाली पर बैठता हूं वह झुक झुक कर गिरती पड़ती है। मां, ने कहा—बेटे! तू तो जवान भी उतना ही बड़ा है।

25. रज्जी मह्स, घमावां राज्वाड़ा।

भैंस का पेट भरा हो तो भी घुमांव भर ज़मीन को उजाड़ देती है।

26. बड़ेयां रे घर, पराला रे बुजड़े।

बड़ों के घर में अनहोनी बात। इसी का हिन्दी रूपान्तर है—ऊंची दुकान फीका पकवान।

27. हण्डुए रा मुंह खुला हो तां कुत्ते जो तां सब्र चाहिन्दी।

अगर बांटने वाला उदार हो तो प्रापक को तो कुछ सब्र चाहिये।

28. तंजे बड़ पक्के तां कावां री चूंजां वी पक्की गियां।

जब लाभ का समय आया तो लाभ उठाने के योग्य न रहे। बट वृक्ष के फल पकने की प्रतीक्षा की पर जब वे पके तो कौवों की चोंचें भी पक गईं।

29. अपणा छिक्को ता 'जूह' जे होरी रा छिक्को ता 'फिटे मुंह'।

अपना बच्चा छींके मारे तो 'जू' कहना और दूसरे का बच्चा छींके तो बुरा भला कहना।

30. औन्दू राज भवाणेयां रा सौहे हो भाव आट्टे रा सौहे ही भाव दाणेया रा।

हिन्दी में इसका रूपान्तर है—

अन्धेर नगरी चौपट राजा,
टके सेर भाजी, टके सेर खाजा।

अर्थात दुर्लभ और सुलभ चीजों के भाव एक ही हैं।

31. गोहां रे कक्कड़ भण्यारे।

कक्कड़ तेज़ दौड़ने वाला जानवर है, वह किसी की नौकरी क्यों करेगा परन्तु यदि वह अपने से घटिया गोह की नौकरी (पानी भरना) मान ले तो हंसी की बात होगी।

32. खिलिया मढ़िया गिद्द्ड़ पक्याले।

जहां कोई समझदार न हो वहां मुखिया बन बैठना। खण्डहरों के मन्दिर में गीदड़ का ही पुजारी बन जाना।

33. गठी नी बड़ियां, जगन्नाथा जो अड़ियां।

गांठ में बड़ियां भी नहीं हैं पर जाना जगन्नाथपुरी चाहते हैं। अनहोनी इच्छा।

34. तिन्हां जे ऊटां ओल्यां ने भैयचारे पाणे
तिन्हां दरवाजे उच्चे रखणे।

बड़ों से मित्रता करने पर कुछ कष्ट तो सहना ही पड़ेगा जैसे ऊंट वालों के धर्म-भाइयों के दरवाजे ऊंचे चाहियें।

35. बाही थी नसाणा, छोही प्राणा।

निशान कहां था, तीर कहां चला गया। गलत अनुमान।

36. हऊं राणी तू राणी, कुण भरो खूहा रा पाणी।

जब कोई भी काम करने के लिये तैयार न हो, तब कहा जाता है।

37. सरम करेन्दी अन्दर वड़ी बसरमे बोल्या माहते डरी।

शर्म के कारण अपने घर के अन्दर चली गई परन्तु बेशरम ने समझा मुझ से डर कर भाग गई। यह कहावत तब कही जाती है जब कोई बेशरमी पर ही उतर आए।

38. हुज्जां जो बान्दरी कने टुकड़ेयां जो झोली।

कष्ट तो दूसरों को पर लाभ अपने लिए। मदारी नचाता तो बन्दर को है पर जब उस से प्रसन्न हो कर कोई रोटी का टुकड़ा फैंक दें तो उसे अपने झोले में डाल लेता है।

39. सद्दी नीं बुलाई, लाड़े री भुआ गलोली।

बिना बुलाए ही अपना सम्बन्ध जताना आरम्भ कर देना। अर्थ है—बुलाया नहीं फिर भी वर की बूआ आगे आगे।

इसे इस प्रकार भी कहा जाता है—सद्दी नीं बुलाई हऊं बी लाड़े री ताई।

40. पहाड़ी मित्त. किसके, भत्त खाहदा खिसके।

पहाड़ी लोगों का एक स्वभाव है कि वे किसी के गहरे मित्र नहीं होते जब काम हो जाए तो एक दम खिसकने की बात करते हैं। अपने ऊपर इस प्रकार की व्यंग्योक्ति क्या आपने किसी और समाज में भी सुनी है? एक दम स्पष्ट सपाट बात।

कुछ व्यक्ति भरे हुए पेट वाले, कुछ मीठे वचन बोलने वाले तथा कुछ चीज कड़वी चाहियें । देखिए एक सूक्ति में सारी बात कितने सरल ढंग से कही गई है—

41. तिन्नो रज्जे चाहिए वैद, महाराज, राज।
तिन्नो भुक्खे चाहिए, नाई, कुत्ता, बाज ।
तिन्नो मिठे चाहिए, जोरू, कुड़म, कमीण।
तिन्नो कौड़े चाहिए, तेल, तमाखू, फीम।

वर्तमान सन्दर्भ में इन बातों को सामयिक नहीं कहा जा सकता परन्तु एक समय था जब सामाजिक व्यवहार में किसी ने इन्हें अनुभव की कसौटी पर परख कर रच दिया होगा। इसी प्रकार एक अन्य लोकोक्ति देखिए —

42. हिलकदी हलाड़ी, घरा नेड़े कवाली।
घरे रण्ड कंग्याती, सै अज्ज मरो चाहे
कलकिया राती ।

तीनों चीजें—हिलने वाली हलाडी, घर के समीप चढ़ाई, घर में अधिक कर्कशा स्त्री—ये तीनों आज मरें चाहे कल । इनके जाने का दुःख नहीं मानना चाहिये ।

सभी व्यक्ति एक समान गम्भीर स्वभाव के नहीं होते । कुछ इतने छिछोरे होते हैं कि उन पर यह कहावत ठीक उतरती है :—

43. चूहे जो मिली सुण्डी री गंढी, सै वणी बठेया पणसारी।

अर्थात् चूहे को सोंठ का एक गट्ठा मिल गया, वह अपने आप को पनसारी समझने लग गया । तथा —

44. जली मुई घटवारी, मेरे नौ परौहणे आए।

अर्थात् चिड़िया को इस बात का अभिमान हो गया कि उसके नौ मेहमान आ गए ।

लोग मान उसका करते हैं जो बड़बोला हो—

45. नक्को कुद्दी तोड़ो ताल, तिसजो जाणो सारा जहान।

जब मां बाप न रहें तो डर किस का? कहावत है-

46. सराहिन्दी कुड़ी जुलाहयां रे तुरी।

अर्थात् अधिक मान देने पर ऐंठने वाला व्यक्ति अन्त में धोखा खाता है ।

इसी तरह कहा गया है कि बिगड़े हुए लोग डण्डे से भी ही सुधारे जा सकते हैं तथा कांटे सलहंगा (कांटेदार झाड़ियों को उठाने का दुमुहा डण्डा) से ही उठाए जा सकते हैं —

47. डण्डा पीर मसटण्डेयां रा, सलहंगा पीर कण्डेया रा।

विवाह के उपरान्त सगे भाई भी बिछुड़ जाते हैं—इसका मुख्य कारण दूसरों के घरों से बहुओं—लड़कियों का आना है—

48. आइयां पराइयां जाइयां, सै बछोड़ो सक्यां भाइयां।

जो अपने से बलवान से शत्रुता मोल लेता है, उसे हानि उठानी पड़ती है ।

कहावत है—

49. सै जे अम्बरा पर थुको, से तिस पर ही पौहां।

अर्थात् जो आकाश की ओर थूकता है, वह उस पर ही गिरता है ।

जहां एक बार धर्म का नाम ले लिया वहां भ्रम नहीं रह जाता । तभी तो कहते हैं—

50. जित्थी जे धरम उत्थी क्या भरम।

सामाजिक व्यवहार में बड़ों का स्थान बड़ा ही है । मुहावरा है—

51. बड्डे पकड़ी बांह, ता क्या देणी नांह।

अर्थात् जब किसी बड़े ने किसी बात के लिए बाजू पकड़ लिया तो इनकार क्या करें?

जिन के मन में खोट न हो उन्हें तीर्थ-व्रत की आवश्यकता नहीं । कहा है—

52. तिन्हां रा जे मन चंगा, तिन्हां रे घरा च गंगा ।

जहां कोई अनुशासन न हो—

53 अन्हीं माम्रो पुतरा जो नीं पछयाणदी।

तथा जहां झगड़ा और अन्धेरगर्दी पड़ जाए वहां से भाग जाना चाहिए—

54. जित्थी जे पया खाह फाह, तित्थी ते नहठदेयां ही लाह।

आप की भूल से आप को तो हानि हुई, हमें भी कष्ट उठाना पड़ा । कहावत है —

55. आप गले देया बाह्मणा तैं जजमान बी गाल्या।

अर्थात् अपने आप गलने वाले ब्राह्मण ! तुम ने तो यजमान भी गला दिया ।

56. घरें आया नाग नीं पुजणा, बामिए पुजणे जाणा।

बाम्बी की पूजा तो करना पर घर में आए हुए नाग को दुत्कारना । ऐसे ही एक अन्य कहावत है —

घरा रा जोगी जोगड़ा, परदेसी जोगी सिद्ध ।

कार्यसिद्धी से पूर्व ही कई लोग प्रसन्नता व्यक्त करना आरम्भ कर देते हैं और ऐंठते फिरते हैं । उनके सम्बन्ध में कहा गया है —

57. कणक खेता कुड़ी पेटा, आओ जवाइयां मण्डे खाइ जा ।

अर्थात् गेहूं खेत में है, लड़की अभी पेट में है पर (होने वाले) जामाता को गेहूं के पकवान खाने का निमन्त्रण देना ।

एक कहावत में स्त्रियों की अकल और भैंस के सींगों को पीछे हटने वाला बताया गया है,

देखिये—

58. जानना री **अक्ल कने मेंहसीं** रे सिंग पिच्छे जो ही हटा एं ।

59. सुणनी जना री, करनी मना री ।

सुन तो सब की बात लो परन्तु सुझावों के कार्यान्वियन से पहले उसका मनन कर लो और उचित-अनुचित का विश्लेशपण कर लो ।

60. स्याणे रा गल्लाई रा कने अमले रा स्वाद पिच्छे ते आवा हां ।

बुजुर्गों (बुद्धिमानों) की कही गई बातें तथा आमले का स्वाद बाद में ही याद आता है ।

61. हसदा माहणू कने हिलदा खुण्ड बुरा हुग्रां हा ।

सामान्य व्यवहार की बात है कि अधिक हंसने वाला व्यक्ति तथा पशु बान्धने का हिलने वाला खुण्ड (एक लकड़ी जिससे रस्से के सहारे पशु बान्धा जाता है) अच्छे नहीं होत क्योंकि इन दोनों का विश्वास करना कठिन होता है ।

कहां तक गिनाएं, हर अवसर पर ही अनुभव को दरशाने वाले मुहावरे आपको हर क्षेत्र में सुलभ हो जाएंगे। ये तो जनता के ज्ञान-कोष है ।

—11 ए, रौड़ा सेक्टर,
बिलासपुर (हि० प्र०)

मण्डियाली लोकोक्तियां

—डा० कांशी राम आत्रेय

1. अम्मा बले ए लम्मे चौड़े पात केसरे ।
देश में परदेसी ।

2. अन्धा, काणा, गंजा, टणेपरा, इन्हां ते डरो मेरे परमेसरा ।
कुछ कुटिल शरीर और कुटिल अंग वाले व्यक्ति तथावत कुटिल मन भी होते हैं ।

3. अपणे पट्टी रे खित्ये भी खरे ।
आप काज महा काज ।

4. आपणे गोहरा गोहटा भी खरा ।
पास की वस्तु पते की ।

5. अन्धी देवी टुण्डा पर्जला, नकटा धुप धुखाणे वाला ।
जस देव तस पुजारी ।

6. अक्ल चरने चली गई री ।
बुद्धि कम होना ।

7. अपणा हाथ टुक्की बैठे ।
अपना अधिकार खो चुके ।

8. अन्हीं अपने पुत्रा सरांह ही ।
मूर्ख अपनी प्रशंसा करते हैं ।

9. अक्ल बड़ी ही म्हेंस नीं ।
बुद्धि में बल है ।

10. अपणा हाथ जगरनाथ ।
स्वयं की सत्ता ।

11. आपणे रागे राग, बगानें लगो आग ।
अपनी अपनी रुचि ।

12. आप मरे जग परलय ।
मृत्यु के पश्चात् विश्व का अन्त ।

13. आपणी बिगड़ी होश होरी जो बोव ।
नाच न जाने आंगन टेढ़ा ।

14. आपणे भाण्डे ता कुम्हारी भी सरा हीं ।
अपने दही को कौन खट्टा कहता है ।

15. आपू मलवी पौडर सुर्खी, स्याणी मरवी सुरकी सुरकी ।
अपना पेट भरना ।

16. ग्राई बलाई से होरी रे सिरे पाई।
दोष थोपना।

17. ग्रापणा सिर ग्रापू नी सवाहरवा।
अपनी बात अपने आप नहीं बनाई जाती।

18. ग्राठ पूर्बिये नौ चूल्हे।
अलग अलग खिचड़ी।

19. ग्रापणे मासा नी दान्वे बढोंदी।
अपना अपना पराया पराया।

20. ग्रापणे नाका री बास नी ग्राउन्दी
अपने दोष नहीं दिखाई देते।

21. ग्राए गरदश रे फेर मकड़ी रे जाला विच शेर।
कुअवसर ऐसा ही है।

22. ग्राग्रोन्दे जान्दे खाई जाग्रो घरा रे गाग्रो गीत।
अपनों से बैर परायों से प्रीत।

23. ग्रापू जो ता फूहड़ भी सराहीं।
अपना रूप सब को प्यारा।

24. इन्हां तिलां तेल केत्थी।
कार्य सफलता की क्या आशा।

25. इक ता खट्टी कढ़ी दुग्रा निम्बुग्रां री पुठ।
लंगड़ा बहाना।

26. उजड़े घरा बिल्ली राणी।
अन्धों में काना राजा।

27. एक पापी सारे बेड़े जो डुबो हाँ।
एक मछली सारे तालाब को गन्दा करती है।

28. एक फेरे नत्थ घड़ान दुज्जे फेरे नक्क चढ़ान।
पल में तोला पल में माशा।

29. ग्रोलिया रे बिला मंझे दांए देणा मिक्कू कने नी देणा।
जाट गुड़ न दे भेली दे।

30. कुग्रारा चलेग्रा कड़माइया, ग्रपणी करे कि पराइया।
पहले आप फिर जगत।

31. कुड़ी पेटा कणक खेता, ग्रा जमाइया माण्डे खा।
समय से पूर्व कल्पना।

32. कुत्ते जो हाड़के रा स्वाद।
आदत और लालच की बात पक्की।

33. कांवा रा मास किन्नें खावेया
कृपण का धन कौन खाए।

34. कुछ पीहण गिल्ला, कुछ घराट ढीला।
दोनों ओर की भूलें।

35. काले माह एको रास।
चोर का साथी मोर।

36. कोलीरा किरड़ कौली जो।
जैसी करनी वैसी भरनी।

37. कुत्ते हल बाहन्दे तां बैल केस रखणे थे।
मेंढक के चमड़े से जूते नहीं बनते।

38. काण्डे रा मुंह पहले ते ही पैना हुग्रां।
होनहार बिरवान के चिकने चिकने पात।

39. केत्थी राम राम केत्थी जम जम।
दिन रात का अन्तर।

40. कज्जल ता सभ ही बाहां हें पर
मटाका कोई मारा हां।
काम काम में अन्तर।

41. कसूर ग्रोथा रा चुत्थनी फल्यूड़ी।
फांसी किसी को दोष किसी का।

42. कुब्बे बाही लत्ता री तेसरा कुब्ब सीधा होया।
अन्धा क्या मांगे दो नयन।

43. खाई लेणा, पी लेणा करी लेणा जग, कल परसों मरी
जाणा, लगी जाणी ग्रग्ग।
खाग्रो पीग्रो मौज लो।

44. खरा खाधी रा माड़ा बोलीरा नी भुलदा।
अच्छा खाद्य, बुरा वचन कभी नहीं भूलता।

45. खिल उटकी कने भठो नी फुकदी।
ओछों से बड़ों के काम नहीं होते।

46. खेता खाग्रो बकरी डान भरे खतरो।
करे कोई भरे कोई।

47. खर्च खाणा पल्ले रा कम करना दल्ले रा।
मुफ्त की बेगार।

48. गोरी रा मास जाहां बिण्डूएं।
सभी वस्तुएं सुन्दरता के कारण विनाश का कारण बनती हैं।

49. गोहां क्या ज्ञान बंदरा क्या दान।
मूर्ख को उपदेश क्या?

50. घर बगाना था पेट ता अपणा था ।
माले मुफ्त दिले बेरहम ।

51. चलदे घराटा गट्टा पाणा ।
विघ्न डालना ।

52. चोरा रा मन पेहले ही काहाला हुआं ।
सच्चे का बोल बाला झूठे का मुंह काला ।

53. चिणदे नी गए सुरगा खणदे ही गए प्याला ।
किसी कार्य का अन्त नहीं है ।

54. देखी रे जुट्टे छेड़ बड़ी मजाजी माहणू कड़ेड़ बड़ीं ।
टूटा जूता और छुछला मनुष्य आडम्बरमय होता है ।

55. छोहरूआं जो छा नी जुड़दी, जबरी पतीर मागां ही ।
किसी की हंसी चिड़ियों की मौत ।

56. छीलेयां ता छोहरूआं कने मुंह नी लाणा ।
किसी प्रयत्न का निष्फल होना ।

57. जेसरा जे लूण पाणी खाणा तेसरा गुण गाणा ।
जिसका खाना उसका गुण गाना ।

58. जेस बगानियां बसणा तेस सुणने मन्दड़े बोल ।
अपनी गली में कुत्ता भी शेर ।

59. जेत्थी जे आपणा पोपणी तेत्थी केसरी थाली तोपणी ।
स्वार्थ अन्धा होता है ।

60. टोली टोली खसम किता से इल्ले कावें नित्ता ।
कठिनता का फल भी निष्काम ।

61. टके रा हाण्डू गया आदमी रा पता पाया ।
परीक्षा फल थोड़े में ही पता पया (कुछ हानि पर अनुभव) ।

62 तवे री कच्ची, चुल्हे नो पक्की प्योके री कपती घरा नी वस्सी ।
रोटी तवे पर ही और लड़की पिता के घर से ही पक्की होनी चाहिऐ ।

63. बितियां जांघा कुत्ता नी खान्दा ।
मांगे मौत भी नहीं मिलती ।

64. देइए जे चजे चारें नीहुंगी ता ता गलें बातें देखा हार दी ।
गुण नहीं तो रूप की तो रानी हो (वाणी के नयन नहीं) ।

65. दुख खान्दे कोई नी देखदा बिल्ली मारदी सुणी जाहीं ।
दुख सुख मनुष्य के साथ साथ चलते हैं ।

66. ध्याड़िया घूण मधूणी राती चरखे पूणी ।
समय का सदुपयोग ।

67. न कुछ पन्ने मंझ न कुछ पोथी मंझ,
जो कुछ हा से दो रोटी मंझ ।
रोटी सबको प्यारी ।

68. नरेला री बेली बिबड़ ।
अच्छे पिता के कुपुत्र ।

69. परं मुई मासी एबे आई हासी ।
गड़े मुर्दे उखाड़ना ।

70. बिल्ली ता काठा री बणाऊं पर म्याऊं किहां करी कराऊं ।
चलती को चूड़ियां नहीं डाली जातीं ।

71. बले जिन्हा घरां रे चलण चलाणे, खोली परांदे बन्हण पाण ।
उत्तरदायी को सब कुछ करना है ।

72. बहुए घर बार तेरा छिक्के हत्थ देखां लान्दी ।
अकारण गले मढ़ी सरदारी ।

73. भौन्दू राजा बुहाणे रा, सेहे भाव आटे रा सेहे दाणे रा ।
टके सेर भाजी टके सेर खाजा ।

74. मोर नाचेआ मरेटियां, तीतर नाचेया चावे, कजो नाचाहीं बुधीयें तेरा फुहन्द खाथी रा कावें ।
बिना कारण प्रसन्नता ।

75. मच्छी रे बच्चे पहले ले ही तारू हुआं हे ।
जन्म स्वभाव का कारण है ।

76. मोहला क्या म्यान, मड़ा क्या ज्ञान ।
मूर्ख को ज्ञान कहां, मूसल को म्यान कहां ।

77. राह जान्दिए बलाई तू माह मंझे जायां आई ।
आ बैल मुझे मार ।

78. राण्डा रे मारी रे से मूए, विण बलधे मुए
करसाण । कंधू री क्वालिये से मूये
जिन्हां री जांधे नी हा त्राण ।
स्त्री, बैल और बल के बिना काम नहीं चलता ।

79 सेजे हाली रे मना सै बलधा री कहना ।
दूसरे के मन की बात पहचानना ।

80. हुंवालियां हियूं निम्बल त्यूं ।
हिमालय के पास हिम पड़ने से आकाश निर्मल हो जाता है ।

—गांव तथा डाकघर टीहरा,
जिला मण्डी, हि० प्र०

कुल्लू जनपद में लोकोक्तियों का प्रयोग

—विद्या शर्मा

लोकोक्तियां लोक साहित्य का अभिन्न अंग मानी जाती है। जीवन में गहरे अनुभवों का आभास लोकोक्तियों द्वारा ही होता है। लोकोक्तियां भाषा में रस का संचार करती हैं तथा उसे अधिक रोचक बनाती हैं। अर्थ की दृष्टि से लोकोक्ति अपने आप में पूर्ण होती है।

आज तक लोकोक्ति की भिन्न-भिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न परिभाषाएं दी हैं। डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल ने लोकोक्तियों को मानवी ज्ञान के चोखे और चुभते हुए सूत्र की संज्ञा दी है। डा0 कृष्णदेव जैसे विद्वानों ने लोकोक्ति को कहावत का ही पर्यायवाची माना है। पाश्चात्य विद्वान भी लोकोक्ति के सम्बन्ध में एक मत नहीं हैं। जर्मनी के प्रोफेसर ओटो हाफ्लेर ने लिखा है कि लोकोक्ति में प्रतीकवाद केन्द्रित रूप में उपलब्ध होता है, जिसका अतिक्रमण सुन्दरतम गद्यात्मक पदावली भी नहीं कर सकती। कहावतों के सम्बन्ध में अरस्तू ने बहुत सुन्दर शब्दों में परिभाषा देते हुए लिखा है कि "कहावतें तत्वज्ञान के खण्डहरों में से चुन कर निकाले हुए टुकड़े बचा लिए गए हैं।"

सरलता, सरसता, अनुभूति, निरीक्षण, भावों की विशालता लोकोक्ति की मुख्य विशेषताएं हैं। कुल्लू जनपद भी लोकोक्तियों का भण्डार है। कुल्लुई में लोकोक्ति के लिए कुछ अन्य शब्द भी प्रयोग किए जाते हैं: जैसे कहावत, बखाण, नवाण, दृष्टान्त, इत्यादि-इत्यादि।

यहां पर कुल्लू क्षेत्र में प्रचलित लोकोक्तियां व उनके प्रयोग के सम्बन्ध में वर्णन है। जब कोई नई चीज प्रयोग में लानी हो और उसका उपयोग ठीक प्रकार से न करना आए तो लोकोक्ति को प्रयोग में लाया जाता है—

1. नऊंई फकीरी ठुट्टे रा काल।
नये कार्य में बाधाएं।

2. शर्मा आली हान्दरे तरी, नाकटिए बुझु मूंन डोरी।
किसी दो की लड़ाई में यदि शर्म वाली लड़ाई छोड़ कर अन्दर चली जाती है तो बेशर्म सोचती है कि यह मुझ से डर कर अन्दर चली गई है। भाव यह है कि शर्म वाले और बेशर्म में बहुत अन्तर है।

3. नहीं लोखदे नीं नोचे ता चोरत भौना सी।
जो मुढ़मति लोग होते हैं वे या तो किसी काम को करते ही नहीं, यदि कार्य करने लग जाएं तो पीछे नहीं हटते, चाहे नुकसान ही क्यों न हो जाये।

सोमसी

4. दित्ती खोल नी खाए कोहलू ही जाए।
जो व्यक्ति अपने घमण्ड में आकर किसी के आगे न झुके विशेष रूप से जब उसको कोई चीज दी जा रही हो, परन्तु उसी वस्तु की प्राप्ति के लिये बाद में स्वयं ही प्राप्त करने (मांगने) की इच्छा रखे।

5. जीन्दे नी दे फुल्ले रा डोहलरू, मोरिया फल्ले री हारा।
जीवित व्यक्ति की तो कोई कदर न की जाए और मर कर उस पर पुष्प-मालाएं चढ़ाई जाएं।

6. भोले री सोला चन्द्रे री पन्द्रह।
जो व्यक्ति दिल से साफ हो उसकी सदैव उन्नति होती है जो व्यक्ति दिल का साफ न हो अर्थात् चालाक हो, वह अपने आप ही पीछे रहता है।

7. कदी नोऊ नोऊ शाड़े ता कदी नांगे घुआड़े।
यदि चीज़ मिले तो इकट्ठी ही मिलती है, नहीं तो नितान्त अभाव रहता है।

8. कुब्बे बै मारी लोत, ता सो पोई सबौत।।
कुबड़े व्यक्ति को गुस्से के मारे लात मारी पर उसका कुब्ब (कुबड़ापन) उससे ठीक हो गया। कहने का भाव यह कि किसी पर की गई बुराई उसके लिए अच्छाई बन गई।
"सबौत" का अर्थ यहां पर सीधी से है।

9. सुखे री तेंइएं लोद्ठे शुरू परीणों तोखे भी कुट्टी काऊणों चीणों।
जिस व्यक्ति के भाग्य में सुख व आराम न हो तो वह चाहे कहीं भी चला जाए परन्तु उसे भार ही ढोना पड़ेगा। 'काऊणी चीणी" एक प्रकार का अनाज होता है।

10. एक रोज पाऊणा, दुज्जे रोज डराऊणा।
किसी के घर मेहमानवाजी के लिए एक बार जाना ही उचित होता है। यदि बार-बार जाएं तो उस व्यक्ति की प्रतिष्ठा कम हो जाती है।

11. काची कोणकी रे ठारा पकवान।
कच्चे गेहूं की कई चीज बन सकती हैं, अर्थात्—जब तक कोई बात अभी अधूरी हो तो उस में कई प्रकार से मोड़ दिए जा सकते हैं।

12. गोंई रा भूलुआ कुए रा फेर।
यदि थोड़ी सी भूल हो जाए तो उस से चक्कर अधिक पड़ जाए तो इस लोकोक्ति का प्रयोग किया जाता है। गोंई पग को कहां जाता है तथा 'कुए' कोस को कहते हैं।

13. जौस रे हौथान डोई तिन्हरा सिभ कोई।
जिस के हाथ में कुछ शक्ति हो उस की सब कोई चाहना करता है। यहां पर डोई का अर्थ विशेष प्रकार की कड़छी से है।

14. होथे री सिभ नेभ्रा सी, मौथे री कोई नी नेन्दा।

हाथ की चीज को तो कोई भी छीन सकता है परन्तु भाग्य में जो हो उसे कोई भी छीन नहीं सकता। अर्थात् भाग्य का लिखा कोई टाल नहीं सकता।

15. लबड़ बँ नी लागदा किछ बोबरू बँ लागा सा घोऊ।

बात कहनी तो आसान होती है परन्तु व्यवहार में लाना कठिन होता है। लबड़ का अर्थ होंठ है।

16. कुंआरा चोलू कड़माई, आपणो केरे कि पराई।

जो आदमी स्वयं किसी चीज से वंचित हो वह दूसरे की सोचने से पहले स्वयं का लाभ सोचेगा।

17. जेतरी खाखी, तेतरी भाखी।

किसी विषय पर यदि परिचर्चा हो तो सब की अपनी-अपनी राय होगी, अर्थात् जितने व्यक्ति होंगे उतने ही विभिन्न विचार होंगे।

18. जुणीए केरी शर्म, तेईरे फुट्टे कर्म।

जो आदमी व्यर्थ में शर्म करे वह जीवन में कभी भी उन्नति के पथ पर अग्रसर नहीं होता।

19. आगे नोई पीछे ढोग।

आगे दरिया और पीछे पहाड़ हो तो जीवन कितना दूभर होता है। जिस मनुष्य को अत्यन्त विपदा आ पड़ वह इस लोकोक्ति का प्रयोग करता है।

20. होरी री जूं भी भालिया सा आप पन्थला मेंहशा भी नी होरींदा।

अपना दोष देखा नहीं जाता। चाहे वह कितना ज्यादा हो परन्तु दूसरों का छोटा सा दोष भी स्पष्टतया दिखाई देता है।

21. बढ़ई रे घौर शौके छोऊएदे।

जो दूसरों के तो घर बनाता है परन्तु जिसका अपना घर लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़ों का बना हो। शौके का अर्थ है लकड़ी के छोटे टुकड़े।

22. तोले री जीभ नी हिलाणी बाट्टी रा मूंड हिलाणा।

छोटे सी जबान से उत्तर न देकर इतने बड़े सिर को हिला कर अपनी मूर्खता का प्रतीक देना।

23. पड़े शणीए तेरा रूप नी एला ता गुण ता एल्ला जे।

किसी का साथ करने से कुछ न कुछ प्रभाव तो अवश्य ही पड़ता है।

24. चैतरे री बतराऊड़ी, संगत कलारी सौत ब्याली।

यह लोकोक्ति चैत्र मास के सम्बन्ध में प्रचलित है। इस मास में मौसम की अनिश्चितता सदैव बनी रहती है। कभी इतना अन्धेरा हो जाता है कि प्रतीत होता है शाम हो गई। एक मिनट में घनघोर घटाएं आती है और एक मिनट में ही मौसम साफ होता है।

25. सियाणा कुणीआ मारु ता याणा कुणीए तारु।

भाग्य के आगे कुछ भी नहीं चल सकता। बूढ़े को कोई मार नहीं सकता, जवान को कोई बचा नहीं सकता। सत्यता सदैव सत्यता ही रहती है।

26. दूधे रा दूध पाणी रा पाणी।

सचाई छुप नहीं सकती, इन्साफ हो ही जाता है।

27. पेहरू भी देआ, पुजदे भी एजा।

जो एक कार्य करने के पश्चात् दूसरे कार्य की भी इच्छा रखे तो इस लोकोक्ति का प्रयोग किया जाता है। एक तो बकरा भी अपना दो, दूसरा उसका पूजन करने भी स्वयं आओ।

28. घीरठे री टोटली।

जिस प्रकार अनाज पीसते समय घराट में एक यन्त्र सा लगा होता है जो सदैव टक-टक करता रहता है बन्द ही नहीं होता, उसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति बोलता ही जाए तो उसे 'घोरठे री टोटली' की संज्ञा देते हैं।

29. भेड़ धीजा सा कसाई आगे।

जो शराफत को न समझे और बेइमान आदमी पर ही विश्वास करे चाहे उससे उस में लाभ हो या न हो तो इस उक्ति का प्रयोग होता है।

30. दुध भी चिआ ता मिगणा पाईया।

यदि काम भी किया और ठीक न किया अर्थात् कठिनाई से किया तो उसका क्या लाभ।

31. कोमें रा नीं ना बेशणे रा नी बेशा।

किसी काम में इतना उलझे रहना कि न तो काम ही हो और न ही आराम करने का समय मिले।

32. जोखे बड्डा भरोसा तोखे मिल्लू शागे रा कोशा।

जब जहां पर अधिक आशा हो और मिले कुछ न तो इस लोकोक्ति का प्रयोग होता है।

33. जुंएं री झिक्के झिकड़ फूकणे।

दूसरों से रोष प्रकट करने के लिये अपना नुकसान करना।

34. गोठी न नी ढब्बुआ ता गुड़ खाणा बाबुआ।

पैसा अपने पास न होते हुए भी वस्तु की प्राप्ति की इच्छा रखना।

35. बान्दर शेटू हो तोखे तेईरा घौर।

किसी को हानि पहुंचाने का प्रयत्न किया गया उससे उसे लाभ प्राप्त हुआ।

36. छेके रे बोड़े तउए न तोड़े।

किसी काम को शीघ्र करने के लिये उसमें अधिक रुकावट आ जाएं, जैसे जल्दी-जल्दी में बड़े बनाओ तो वह सिमट-सिमट कर रहते हैं तथा दुगना समय लगता है।

37. औग भौका सा रोटी पकाइया, रोंड फुल्ला सा खस्म खाईया।

आग जलती है खाना बनाने के बाद —औरत मोटी होती है अपने पति के मरने के बाद।

38. जुणीरी झीश, तेईरी की रीश।

यह लोकोक्ति सुबह उठने के सम्बन्ध में है, जो व्यक्ति सुबह उठते हैं वे जीवन में महान सफलता प्राप्त करते हैं।

43. दूई दुहरु एक मेक पड़ेशणोए तू नाक सेक ।

पति-पत्नी में चाहे कितना भी झगड़ा क्यों न हो परन्तु फिर भी वह एक होते हैं, उस झगड़े में जो तीसरा व्यक्ति पड़ता है वह बाद में मूर्ख ही सिद्ध होता है ।

40. एक चुप शौउ सुख ।

मनुष्य अधिक व्यर्थ की बातें न करे तो आराम रहता है ।

41. रोशी फुकूई पर ब्याटा नी नौठी ।

रस्सी तो जल गई पर उसको बाट नहीं गई । अर्थात् अत्यन्त घमण्ड होना, चाहे नुकसान भी हो परन्तु फिर भी न झुके ।

42. बोहू जीमी हौंसला खान्दी, बोहू जोई खस्मा खान्दी ।

जिस व्यक्ति के पास बहुत ज़मीन हो तो वह भी ठीक नहीं तथा जिस व्यक्ति की एक से अधिक औरतें हो वह भी उस के लिए ठीक नहीं ।

43. बान्दरे रे होथा न नरेल् ।

जो व्यक्ति किसी वस्तु के मूल्य को न समझे उसे वह वस्तु देनी इतनी ही व्यर्थ होती है जितनी कि बन्दर के हाथ में हुक्का पकड़ा देना ।

44. जोखे काऊड़े नी होन्दे तोखे कि ब्यागा नीं हौंन्दी ।

किसी व्यक्ति के बिना कोई कार्य नहीं रुकता यदि किसी स्थान पर कौए न हों तो क्या उनकी काँय-काँय के बिना कोई भी नहीं उठेगा अर्थात् सुबह न होगी ?

45. खाई खाईया टक्के रा कुकड़ ।

जिस व्यक्ति की सेहत न बननी हो तो चाहे वह कितना ही क्यों न खाए वह फिर भी कमज़ोर ही रहता है ।

46. चमारा बं घड़् रे सुपने ।

जो जिस वस्तु की प्राप्ति की चाह रखता है वह स्वप्न में भी उसे याद आती रहती है ।

47. किछ गेहूं गिल्ले, किछ घोरठ ढीले ।

कुछ तो गेहूं गीले हों और कुछ घराट में नुकस हो अर्थात् जब दोनों ही ओर से कसूर हो और किसी को कुछ न कहा जाए तो इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है ।

48. कीड़े रा चीटुआदा जेकड़े न डौरा सा ।

जिस ने एक बार नुकसान उठाया हो, वह सदैव ही सावधान रहता है ।

49. बीझे सरगे री बिजली ।

जब अचानक ही कोई असम्भव बात सम्भव हो जाए ।

50. थुक्के रे बोड़े ।

बहुत ही कंजूसी करना ।

51. दिल्ली रोहिया कुप्पे ।

अच्छे वातावरण में रह कर भी अच्छाई ग्रहण न करना ।

52. बोलिया बकार खाइया डकार ।

जैसे खाना खाने के बाद डकार हाजमे का प्रतीक होता है उसी प्रकार कही हुई बात का परिणाम कुछ और हो सकता है, अर्थात् एक चुप सौ सुख ।

53. ग्राँ रा सनाखा, बजारे रा नाठा एक बरोबर ।

गांव व शहर के व्यक्ति में अन्तर बताते हुए कहा जाता है कि बाजार का आदमी इतना चुस्त होता है कि चाहे वह गूंगा भी क्यो न हो परन्तु फिर भी गांव के ठीक आदमी के बराबर होता है ।

54. घौर फुक्कीया, दियाली केरनी ।

अपना नुकसान उठा कर प्रशंसा प्राप्त करना ।

55. हेरुआदा राक्स भी खरा नीं, हेरुआदा देऊ भी बुरा ।

देखा हुआ बुरा आदमी भी ठीक होता है, न देखा हुआ अच्छा भी बुरा हो सकता है ।

56. घौरठ फिरदी पाली ।

सभी के साथ एक सी बीते ।

57. एक रोज पाउणा दूजे रोज डराऊणा ।

मेहमानवाजी एक बार ही शोभा देती है जो रोज़-रोज़ किसी का मेहमान बने तो उस का निरादर ही होता है ।

58. कदी रड़वा ता कदी चुड़दा ।

कभी तो कुछ न मिले और कभी ज़रूरत से अधिक ।

59. शकल चड़ेले री ता नखरा परी रा ।

कुछ भी न होते हुए भी अपने आप को बड़ा दिखाना ।

60. हीक्का बै बौता ।

जब कोई किसी पर बोझ व चिन्ता का विषय बन जाए तो इस वाक्य का प्रयोग किया जाता है ।

61. धोतरु आया गोतरु ।

यह वाक्य दोहतों के लिए प्रयुक्त होता है उन्हें नाना-नानी चाहे कितना ही प्यार क्यों न करे परन्तु जो प्यार उन्हें दादा-दादी से होता है वह नाना-नानी से नहीं । क्योंकि वे दूसरे गोत्र के होते है ।

62. चार धियाड़े चोरे रे एक ध्याड़ा मोरे रा ।

बकरे की मां कब तक खैर मनाएगी ।

63. कुत्ते रे लिगटा साही ब्याटणा ।

व्यर्थ में ही अपनी अकड़ दिखाना, जैसे कुत्ते की दुम बिल्कुल सीधी रहती है ।

64. चोरे रे मन कोजले ।

चोर की दाढ़ी में तिनका । चोर का मन काला ।

65. जूं ढोग्रा सा लिहुखा बं, लीहुख ढोग्रा सा लितड़ू बै ।

जो आदमी काम से जी चुराता है, वह उस काम को आगे से आगे सौंपता है ।

66. लाटीए धीनी भुआर ता ढोकदे लोड़ी चार ।

यदि किसी बेकार आदमी को काम करने के लिए कहा जाए तो उस की मदद के लिए और भी चाहिए इस प्रकार से उस काम का कोई भी फायदा नहीं होता ।

67. जेतरा बाड़ तेतरा जुबाड़ ।

नुकसान से बचने के लिए जितनी ही सावधानी लें उतना ही अधिक नुकसान हो तो इस वाक्य का प्रयोग किया जाता है ।

68. ऊना धीरे पत्थर पाऊ, लाऊले यारे थोगा नी लाऊ ।

अपनी तरफ से तो चतुराई दिखाई परन्तु उस चतुराई में हुआ नुकसान ही ।

69. बीशे रे बौगं काटणे ।

अपनी ओर से ही बात को कह देना चाहे वह ठीक हो चाहे गलत ।

70. बान्दरें रा बूबू ।

थोड़ी सी चोट लगे पर उसको बताना अधिक ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि कुल्लू जनपद में लोकोक्तियों का प्रयोग यत्र तत्र होता है । इस में कहीं हास्य की धारा तो कहीं व्यंग्य की वर्षा बरसती रहती है तथा दैनिक जीवन म आने वाली नीति व उपदेशों का दिग्दर्शन होता रहता है ।

—गांव ढोभी,
कुल्लू ।

कुलूई लोकोक्तियां

—बाल कृष्ण

लोकोक्ति का साधारण अर्थ 'लोक-उक्ति' है, अर्थात ऐसी उक्ति या बात जो जनसाधारण में बोली जाती हो। परन्तु जनसाधारण की हर बात लोकोक्ति नहीं कही जाती, वरन् केवल वही उक्ति लोकोक्ति होती है, जिस ने विशेष परिस्थिति में जन-मानस पर गहरा प्रभाव डाला हो और जो फिर अपने चुटकीलेपन के कारण स्थायी रूप धारण करके प्रचलित हो गई हो । ऐसी उक्ति आकार में जितनी भी छोटी हो, प्रभाव और अर्थ में उतनी ही विशाल होती है । रूप में संक्षिप्त परन्तु भाव में विस्तृत होना लोकोक्ति का लक्षण है ।

कुल्लुई भाषा में लोकोक्ति को 'बख्यान' कहते है, जो शाब्दिक रूप में 'उपदेश' के अर्थ में प्रयुक्त होता है—"**होरी बे बख्यान आपू बं गोश्टें**" इस लोकोक्ति में शब्द बख्यान का अर्थ उपदेश जैसा ही है, और यह उर्दू कहावत "दूसरों को नसीहत, खुद मियाँ फजीहत" की पर्यायवाची है । इसी तरह एक दूसरी लोकोक्ति में कहा गया है '**समाने जाना, बख्याने नी जाना**' यहां बख्यान का अर्थ सुनी सुनाई बात से है । कुल्लुई 'बख्यान' संस्कृत शब्द "आख्यान" का अपभ्रंश रूप है जिसका अर्थ कहना या 'उक्ति' है तथा बख्यान का अर्थ हुआ–विशेष उक्ति अर्थात विख्यान ।

लोकोक्तियों का मानव जीवन से गहरा सम्बन्ध है । समाज में प्रचलित लोकोक्तियां उस में रहने वाले मनुष्यों के जीवन के हर पहलू पर पूर्ण प्रकाश डालती हैं । मानव की कुछेक समस्याएं समान रूप से घटित होती हैं । चाहे वे किसी समाज, देश, जाति या सभ्यता से सम्बन्धित हों, उनमें कुछ जीवन-साम्य हर जगह विद्यमान होता है । यही कारण है कि कुछ लोकोक्तियों का रूप हर समाज में समान होता है । निस्सन्देह वे विभिन्न भाषाओं में प्रचलित हों परन्तु लोकोक्तियों का मुख्य अंश हर समाज में उस की परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न होता है और ये लोकोक्तियां वहां की सामाजिक परम्पराओं, ऐतिहासिक घटनाओं, भौगोलिक स्थितियों, दैनिक परिस्थितियों के अनुसार हुआ करती हैं । कुल्लु की लोकोक्तियों की पृष्ठभूमि में भी यही वातावरण प्रभावी है । पहाड़ी अथवा कुल्लुई समाज में अतिथि–सत्कार का तो विशेष महत्व है, परन्तु यदि उनकी मेहमान-नवाजी का सम्मान न हो तो उन से रहा नहीं जाता—

खार खाई काउणी, लौद खाऊ मिढा,
बौथी उठिया ढलकी लौंबा ।

अर्थात् अतिथि सत्कार में एक मन भर तो चावल खिलायें हों, एक पूरे मेढे का शिकार भी दिया हो और फिर भी अपमानपूर्ण शब्द कहे तो उस को कौन अदा करेगा । यही कारण है कि कुल्लुई लोग बिना निमन्त्रण के किसी के यहां जाना भी पसन्द नहीं करते क्योंकि ऐसा करने से उन के नाम पर लांछन लगेगा—

बोणी छौंवा रा पाहुणा
पतोसड़ नाऊं डाहणा ।

घर आये मेहमान का यदि ठीक प्रकार से सत्कार न हो तो लोकोक्ति प्रसिद्ध है—

पाहुणे आए आई,
कुटआ पिशआ नोआई ।

पाहुणचारी ही नहीं, साधारण रूप में भी कुल्लुई लोग बांट-बंटा कर खाना अधिक पसंद करते हैं —

केल्हे खाइया मैल,
बोडिया खाइया फोल ।

बांट कर खाओ तो फल प्राप्ति है, नहीं तो उसका मैल ही बनेगा ।

पहाड़ के लोगों की एक विशेषता शांतिप्रियता है । पहाड़ों का शांत वातावरण लोगों को भी शांत स्वभाव का बना देता है । वह किसी दूसरे के कामों में दखल देना कभी उचित नहीं समझते । स्वयं एकांत में बैठना अधिक पसंद करते हैं, बजाये किसी से लड़ाई झगड़ा मोल लेने के । तभी तो लोकोक्ति प्रचलित है—

दुबली भेड़ नकंग चौरे,
न ठेसा लागं न जान मौरं ।

"दुबली भेड़ यदि एकांत में चरने लग जाये तो न उसे कोई धक्का लगेगा न उस की जान जायेगी" । कुल्लुई लोग खाहमखाह झगड़ा मोल लेना कभी उचित नहीं समझते **'गुह कोतिया घोंदिह खोजणा'** कभी भी समझदारी नहीं होती । गन्दगी उछालने से अपने सिर पर गंद पड़ता है ।

'जीओ और जीने दो' उन के जीवन का मुख्य नियम है **'बंठे माँहू बं धू देना'** अर्थात् शहद के छत्ते को छेड़ना कोई अकलमंदी नहीं है । यदि छेड़ोगे, तो काटेगा तो जरूर ही । भले ही किसी कारण समय पर पत्थर का जवाब ईंट से न भी मिले तो भी बिना कारण दखल-अंदाजी शत्रुता को जन्म देती है और उस से बदले की भावना जागृत हो जाती है ; तब वह यह कहे बिना नहीं रह सकता कि कोई बात नहीं—

"नौहू पुनू थोड़े एंदे बोठे" । कभी न कभी मेरी बारी भी आ ही जायेगी । यही कारण है कि कुल्लुई समाज काम और उपयोग के उपाए के सिवा किसी दूसरी बात को महत्व नहीं देता —

जौस गोहरा होडणा नी,
सो शावणी कीजि बं ।

कुल्लुई लोकोक्तियों में नैतिक तथ्यों पर आधारित उक्ति की बहुलता है ।

"बौत छूटा सा संग नी छुटदा" लोकोक्ति में मूल सिद्धांत की बात कही गई है । बेशक रास्ता बिछुड़ जायें संग कभी नहीं छोड़ना चाहिये । मित्रता हो तो अटूट हो, साथी बनाया हो तो जन्म साथी हो । मित्रता हमेशा निष्कपटता से निभानी चाहिये । एक दूसरी लोकोक्ति में कहा गया है— **"कुत्ता बं नी लूण, निर्गुणा बं नी गूण"** निर्गुण व्यक्ति के लिये गुण की बात वैसी ही है जैसे कुत्ते के लिये नमक की बात है । कुत्ते को नमक का कोई प्रयोजन नहीं, वैसे ही कपटी व्यक्ति को गुण के सिद्धांत का कोई महत्व नहीं ।

"तौता खाइया जीह् ब फुकिया सा" लोकोक्ति में मानव जीवन का एक आदर्श छुपा है । मनुष्य को हर कार्य संतोष से करना चाहिये । जल्दबाजी से कार्य बिगड़ जाते हैं जैसे गर्म भोजन खाने से जिव्हा जल जाती है । नीति जो भी अपनाई जाए उसे सोच समझ कर अपनाना चाहिए , परन्तु एक बार अपनाने के बाद असूल

को तोड़ना मानव की भारी कमजोरी है । यही बात कुल्लु की लोकोक्ति **"पुत्र छूटा सा, सूत्र नी छूटदा"** में निहित है । पुत्र यदि ठीक रास्ते पर न चले तो उसको छोड़ा जा सकता है परन्तु असूल का त्याग नहीं किया जा सकता । एक और लोकोक्ति में कहा गया है कि **'पेट ता पड़ेश नी बगाड़ने देणा"** अर्थात् पेट और पड़ौस खराब नहीं होने देने चाहियें । इन दोनों के प्रतिकूल होने से व्यक्ति की अपनी हानि होती है ।

नैतिक लोकोक्तियों की तरह तथ्यपूर्ण लोकोक्तियां भी कुल्लुई में असंख्य हैं । इन में जीवन की सच्चाइयों का समन्वय होता है । इन से सामाजिक जीवन के विविध अनुभवों का निष्कर्ष मिलता है । **"बाई प्यारी, माई नी प्यारी"** लोकोक्ति में आजकल के समाज की कितनी अकथ सच्चाई व्यक्त होती है । मातृ जैसा रिश्ता भी आज के समाज में कोई महत्व नहीं रखता, अलबत्ता धन का महत्व बहुत है । धन सब कुछ बना देता है । धन की तरह बात या वचन का विशेष महत्व है । समय बीत जाता है परन्तु कही गई बात या दिये गये वचन हमेशा याद रहते हैं —

"दिहाड़े जाआ सी फियाड़ें नी जांदे" ।

लगता है बड़े परिवार के अवगुण आरम्भ से ही समाज को मालूम थे । जिस परिवार के सदस्य अधिक हों, वह परिवार उन्नति नहीं कर सकता । इसका प्रमाण एक कुल्लुई लोकोक्ति से मिलता है—

बड़ी जमीन बड़ा हाला,
बड़ा टौबर मुहं काला ।

जिस प्रकार बड़ा परिवार उन्नतिशील नहीं होता वैसे ही अधिक भूमि का भी उचित प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि उसे नियंत्रण में रखकर काम में लाना कठिन हो जाता है, मानव जीवन की एक और सच्चाई देखिये—

"नेड़ हाट, नेड़ घौठ, नेड़ मौठ खरी नी हुवी"।

हाट, घराट और मयखाना कभी निकट नहीं होने चाहियें । इन के निकट होने से खर्च में वृद्धि होती है। वृद्धि ही नहीं फिजूलखर्ची की जाती है । क्योंकि नजदीक होने के कारण हर मामूली जरूरत पर भी इन का प्रयोग कर लिया जाता है ।

लोकोक्तियों में व्यंग्य का एक विशेष स्थान है । वैसे तो हर लोकोक्ति में व्यंग्य का अंश जरूर रहता है परन्तु कुछ लोकोक्तियों का उद्देश्य ही व्यंग्य होता है । ऐसी लोकोक्तियों में तथ्य अवश्य होता है लेकिन तथ्य के साथ-साथ एक गहरा व्यंग्य होता है, जो चोट करता है—

खापर जोई तरह न लाआ सा,
चूटी री धौरा पजा आ सा ।

कितनी सच्चाई और कितना व्यंग्य है इस लोकोक्ति में, जो प्रायः उस व्यक्ति की हंसी उड़ाने के लिए कही जाती है जिस की पत्नी उस से बहुत बड़ी हो । सचमुच टूटा जूता भी घर तक साथ देता है और आदमी को घर पहुंचा देता है । वैसे ही बूढ़ी पत्नी भी पति को ठीक रास्ते पर लगा देती है । इसी तरह एक कंजूस

आदमी की खिल्ली उड़ाई है कि उस से कोई वस्तु लेने की आशा ऐसी ही निरर्थक है, जैसे कुत्ते के मुंह से शिकार के टुकड़े गिरने की उमीद बेतुकी है—

कुते रे मुहांन माश,
कोशी री केरनी आश ।

ऐसे आदमी की बेवकूफी पर भी हंसी ही आती है जिससे कभी कहीं अकस्मात् कोई चीज मिली हो और फिर वह हर रोज वहां के चक्कर काटते रहें इस आशा में कि उसे फिर वहां से चीज मिल जायेगी—

एकी गेरें मारु काकड़,
सदा ए तोपू झोकड़ ।

हां, यही तो है कि एक बार कहीं झाड़ी में शिकार मार लिया तो फिर रोज उसी झाड़ी की तलाश होती रही । इस बात का समर्थन एक मुहावरे से भी किया या है "**काणे बौलदा रा भुखणू**" अन्धा बैल और कहां जा सकता है जहां एक बार कुछ मिला हो, वहीं का चक्कर काटेगा ।

मनुष्य को अपनी हैसीयत देखकर व्यवहार करना चाहिये । झूठे अभिमानी की हमेशा खिली उड़ती है । फोका दिखावा अपनी मूर्खता का प्रदर्शन करवाता है—

चुटी री पुला री छेड़ बडी,
चतड़ माणहू री तनेड़ बडी ।

जैसे फटे जूते में आवाज अधिक निलकती है वैसे ही छिछले ज्ञान वाले व्यक्ति में भी दिखावा अधिक होता है । बेडौल शरीर या बिना सिद्धांत के व्यक्ति के प्रति भी बड़ा तीव्र व्यंग्य है—

देऊआ न उथड़ें दानू, मड़ा न उथड़े खानू ।

कहते हैं 'देवता से देव बड़े' वैसे ही जैसे सिर से भी ऊपर किसी के घुटने ।

लोकोक्ति को कहावत भी कहा जाता है । कहावत का अर्थ है कथावत, अर्थात् कहावत का विषय कथात्मक होता है । यद्यपि प्रत्येक कहावत के बारे में यह कहना कठिन है कि उस की विषय वस्तु कोई घटना रही होगी फिर भी इस में संदेह नहीं कि कई लोकोक्तियों का जन्म किसी घटना से होता है। कुल्लूई में कथावत लोकोक्तियों की भारी संख्या है । यद्यपि उन सब का यहां वर्णन करना कठिन हो जायेगा फिर भी उदाहरण के रूप में एक दो का ज़िकर करना युक्ति संगत होगा।

प्रायः देखा जाता है कि बूढ़ी स्त्रियों को अपने पोतों की अपेक्षा दोहतों से अधिक प्यार होता है । एक बार एक बूढ़ी अपने एक छोटे दोहते बालक को तो पीठ में उठाए ले जा रही थी और उसी के हमउमर पोते को पैदल ले जा रही थी । मार्ग में एक कुत्ता मिला और पीठ पर सवार दोहते ने तुरन्त कहा "**कुतेआ, नानी की टांग खा**" परन्तु पैदल चल रहे पोते ने झट पत्थर उठाकर कहा "आ तो सही अभी पत्थर मारता हूं"। इस घटना ने एक कहावत को जन्म दिया जो प्रायः कृत्त्रि प्यार के बारे में कही जाती है— "**एज कुतेया नानी री जौंघा खा।**"

पंजाबी के प्रसिद्ध कवि शाह मुहम्मद ने कहा है "शाह मुहम्मद आद्रतां नी जांदियां, भामें पै जावें पूरियां पूरियां जी" यह आदतों का हाल है । कुल्लू में किसी वृद्धा स्त्री को खाना खाने के बाद नाचने की आदत थी । एक बार उस के पुत्र ने कहा, "मां आज मेरे मित्रों ने मेहमान आना है आज नाचना मत, वरना मेरी बेइज़ती हो जायेगी । मैं तुझे एक टका रिश्वत देता हूं" । मां ने 'हां' भरी । परन्तु आदत तो पक चुकी थी खाना खाते ही उस से रहा न गया । टका आगे करते हुए बोली "**टक्का ले बेटा आपणा डोई पाया मूं नोचणाए नोचणा**" । और यह अब हट्ठी व्यवहार के प्रति अभिव्यक्ति के लिये लोकोक्ति बन गई है। इसी तरह कई अन्य घटना प्रधान लोकोक्तियां प्रचलित हैं ।

—युनाइटिड कमर्शल बैंक,
अर्की ।

शिमला क्षेत्र की लोकोक्तियां

—हरिराम जसटा

लोकोक्तियों अर्थात् नीति वचनों को महासुवी में पखनाणे, नैणा, नयण, बोली सै बोली मि, नाम दिया गया है । इन पखनाणों के निर्माण में परम्परा का महत्वपूर्ण योगदान रहता है । प्रायः संसार की सब जातियों की लोकोक्तियां समान अर्थों वाली होती हैं । फिर भी कुछ कहावतें ऐसी होती हैं जो किसी विशेष अंचल की परम्पराओं तथा वहीं के मिट्टी व जल की उपज होती हैं । दूसरी जगह वे मुखर नहीं हो सकतीं । जैसे महासुवी की एक कहावत है—"घाटौ आजो ठटोईरो देओ सूथणों दी पाणो"—ठोठे (तीर कमान का खेल) खेलने वाले मैदान में आ गए और सूथण (मोटा ऊनी पाजामा) अब ठीक करने लगे हैं। ठोठे का खेल हिमाचल में प्रायः महासूवी क्षेत्र में ही अब तक प्रचलित है, अन्य प्रदेशों में मेलों के अवसरों पर ऐसा कोई खेल नहीं खेला जाता ।

ऐसी असंख्य कहावतों में से कुछ यहीं उद्धृत कर रहा हूं—

1. **औशत ओ मौत कड़ुवी लागो**—दवाई और अकल की बात कड़वी लगती है ।
2. **मांगिओ आणी भीख, तैई खांदा पौड़ा रीख**—मांग के भीख लाए उसे खाने रीछ पड़ गया ।
3. **आगि और पाणी ो ताउलै नी हुईन्द**—आग और पानी से अधिक जल्दी से काम नहीं किया जा सकता ।
4. **एक घोरे डाग जामि छाड़ी**—एक घर तो डायन और यमदूत भी छोड़ देते हैं ।
5. **एकि बारे बीका काठौ रि मि**—एक बार नकली माल भी बिक जाता है, पर हमेशा नहीं ।
6. **कभी बाकरें बैली, कभी शुकिए शैली**—जीवन में कभी मौज है तो कभी मुसीबत ।
4. **जु रैके कि आखियैं दीशदो, तैं आपणी भाणियो कौरदे**—यदि दूसरे की आंखों से नजर आता तो अपनी आंखें निकाल देते ।
7. **जेजी गाव बाशो लि न, तैजी गाव घास ही नहो देई**—जो गाय बोलती ही नहीं, क्या उसको घास ही नहीं दिया जाता ।
9. **रुखो आजैं डालणें, बागरी मिला शपाहता**—वृक्ष ने तो गिरना ही था, हवा को इलज़ाम मिल गया ।
10. **तूरि रि दें ओ भेडो रि बैं कभी नहीं मुकदि**—
लोकवादक की दे दे और भेड़ का बोलना बैं बैं कभी खत्म नहीं होता ।
11. **तेहरो ही आंगणो, तेहरें ही घौर जैहरो कौरलौ तेहरा ही कौर**—
तेरा आंगण, तेरा ही घर, जो करना वही कर ।
12. **जुआ रि तोई झुड़का नहीं दौहि**— थोड़े लाभ के लिए अधिक नुकसान ।
13. **नाकौ दो शिणको खाकौ दो लौ ो**—आसमान से गिरा, खजूर में अटका ।

सच्चाई को आवरण में देर तक नहीं छिपाया जा सकता । इसको इस कहावत (पखनाणे) में प्रकट किया है ।

घोयौ रं गौरं, बौखियौ रं सारं नहीं हुन्दं ।

न धो कर कोई गोरा बन सकता है और न कहने से कोई नजदीकी सम्बन्धी बन जाता है।

वास्तविक नजदीकी कौन है ? इसका उत्तर इस कहावत में मिलता है—

गूंजो जौमिया री हुग्रौ लाईयौ री नीं हुन्दी ।

असली मूछें मुंह पर स्वयं आती हैं, नकली उनका स्थान कैसे ले सकती है ?

गलत इलजाम लगने पर कोई व्यक्ति कह उठता है—

खाग्रौला ढेलू मौलौ ला झगड़ेलू

ढेलू की टोपी झगड़ेलू के सिर ।

आपत्ति पर भी एक लोकोक्ति है—

दशा आजदं नहीं दिशदी, डेंवदी दिशं ।

आपत्ति आते नहीं, जाते महसूस होती है ।

आपत्ति में पड़े मनुष्य की जब कोई सहायता करता या बुरी बात कहता है, तब कहा जाता है—

खौरी रौ आखर, कालौ रा टुकड़ा याद राह ।

पर जाते समय मुसीबत मानव जीवन पर एक अमिट छाप छोड़ जाती है—**डंवदा हाली आंगणो बाहो ।**

किसी असम्भव वस्तु की प्राप्ति की चाह करने वाले व्यक्ति के लिये कहा जाता है—

जींवदं बाघो रो कालजो कोठौ आणौ ?

जीते शेर का कलेजा कौन ला सकता है ?

इसी भाव पर आधारित दूसरी लोकोक्ति है—

न्हाले आले घुघती कोठी मिलौ ?

(थनों वाला पक्षी कहीं मिलता है ?)

बाघी दौ बाकरी कोठी छूटी ?

मुसीबत से कोई बचकर नहीं भाग सकता ?

शेर से बचकर बकरी कहां जा सकती है

ऋतुओं पर आधारित अनेक कहावतें हैं । अधिक वर्षा से काल नहीं पड़ता—

बौरशिग्री काल नहीं पौड़दं ।

इसी तरह एक और कहावत है—

माघ और बाघ राति दीग्रो ।

माघ महीने हिमपात और लकड़बग्घा रात को ही आक्रमण करते " । जो काम जिसका है, वही करें ? इस पर कहा जाता है—

भेड़ौ गिणे खौलं नहीं गाहीन्वं ।

भेड़ें खलिहान में अनाज को बाली से अलग नहीं कर सकतीं ।

किसी का किया हुआ अच्छा या बुरा काम सब को एक न एक दिन नजर आता है । तभी कहा जाता है—

नावी रं बाल नजरि दं आजौ ।

नाई के बाल नजर आते हैं ।

जो व्यक्ति कोई काम नहीं करता, उसे हर समय बुरी बातें सूझती हैं, उसके लिये यह फबती कसी जाती है—

बेला नाई कुक्करो कुंडी ।

फालतू नाई कुत्ते की हजामत करता है ।

अधीर व्यक्ति को धैर्य बंधाने के लिये कहा जाता है—

जसलं लाग्रो ग्रौ सिवं, तलं नहीं बोली नंगा, जेस खे लाग्रौ ग्रौ हेरि तेसखे नहीं बोली भूखा ।

जिसके लिये रोटी और कपड़ा न रहा है, उसके लिये भूखा और नंगा नहीं कहा जा सकता ।

कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा, भानमती ने कुनवा जोड़ा, इस भाव को प्रकट करने के लिये कहावत है—

ढंल दोहवी स्पौइल बासा ।

मानव की एक छोटी सी भल, उसे बहुत लम्बे समय तक गलत रास्ते पर डाल देती है। इसके लिये यह कहावत कही जाती है—

गोंई रं भूलं कोहौ कि ड़बी ।

(एक कदम का भूला व्यक्ति कोसों तक गलत राह पर चला जाता है) एक और कहावत है, जो भरमौर क्षेत्र में प्रसिद्ध है—

घरे न भुज्जी भंग, ते बाहर मियां तड़ंग ।

कोई मनुष्य अपनी शक्ति से बाहर होकर गर्व दिखाता है वह सब व्यर्थ है।

गरीबी पर एक और कहावत है—

निर्धनता सबसे ुरी बला है। इसी पर एक कहावत है—

न खाणे खाण, न मजे बाण ।

गंढी न बेला, ते चढ़ना रेला ।

बिनी दंवौ जातरौ नहीं हुन्दी ।

जब कोई व्यक्ति अपनी मनोकामना प्रकट न कर, देवता से वरदान मांगता है, तो वह कह उठता है—

देवता हौंला तं मनो रो बंडे ।

देवता अन्तर्यामी होते हैं।

हिमाचल लोक-साहित्य की अमूल्य निधि इन कहावतों द्वारा अन्य असंख्य कहावतों के महत्व का हल्का सा आभास मिल जाता है । जहां एक बात से अन्य बहुत सारी बातों का भी ज्ञान हो जाये, उसके लिए भी एक कहावत प्रचलित है—

चावलौ री एक गुल्टी देखि,
सारा हांडा नहीं खारेली ।

कहने का तात्पर्य है कि चावल पकते समय उसके कुछ दानों से उसके पकने का संकेत मिल जाता है। सारे पतीले से कड़छी घुमाने की कोई आवश्यकता नहीं।

मुहावरे

महासुवी मुहावरे भी अन्य भाषाओं की तरह अपूर्ण वाक्यांश होते हुए भी, वाक्य को रोचक, सतेज, और चुस्त बनाते हैं । इनके द्वारा भावाभिव्यक्ति अधिक प्रभावशाली और सशक्त बन जाती है। जैसे—

(1). **घीरटं फिरो नौं (अच्छे दिन आना) ।**
(2) **सौचौ रा संधौं (डर) ।**
(3) **पीपली लागी (जलना) ।**
(4) **आलियौ आणा (तंग करना) ।**
(5) **कान्ही गाशी नचायौ (मुहं लगाना) ।**
(6) **आपण तौ पोषण (स्वार्थ) ।**
(6) **चढ़ी जेही नाचौ (चंचल) ।**
(8) **मूतीयं नौ तौरौ (सुस्त) ।**
(9) **छांडे दि लाते (तिरस्कार) ।**
10) **हीयौ लायौ (दुखी करना) ।**
(11) **मूबं दो डंयौ (बढ़ा चढ़ा कर बात करना) ।**

ये मुहावरे पूरे वाक्य में कितनी शक्ति ले आते हैं :

(1) **कौरं बं जौ कौरतौ थी, कभी तौ मेरे घीरटं फीरो लौ ।**
(2) **मेरी हुई बोलती ही बन्द-सौची पाईया सेंधो ।**
(3) **रामी रि हुई तरक्की, तिन्हों लागी पीपली ।**
(4) **देरा तंस देविनि दं, आजा आलियौ ।**
(5) **तौसे रं सं कान्ही गाशी नचाबि दौ ।**
(6) **आजकलं फंरदे ही आपण औ पोषण दौ ।**

(7) **शौ सभौ सामने चढि जंहि नाचौ ।**
(9) **सूतियं नौ कोसरं तौरियो ।**
(9) **तंथे जाओ डेवने, छांदे दि लाते नहीं लाई ।**
(10) **तौन्हं मेरी हीयौ लाओ ।**
(12) **बसौ तेसरी गोई शूणी , सं औ भूजदो डंयौ ।**

ऐसे अनगिनत मुहावरे महासुवी बोलने वाले अपनी दैनिक बोलचाल में मिला कर उसे अधिक सुमधुर व प्रभावशाली बनाते हैं । अन्य कुछ और मुहावरे प्रयोग सहित दे रहा हूं :

(1) **झूलकू ज्यों लागो (सुन्दर) ।**
तौसी देखियौ झूलकू ज्यों लागौ ।
(2) **भीतरी रीटा, बाहरी चीटा (दोगला) ।**
तंस दी घौचियौ राहं, सं बाहरी सं चीटा, भीतरी रीटा
(3) **शावण-भद्र बहादुर औ (अधिक रोना) ।**
तौसं रौणि रौणि औ शावण भद्र औ ।
(4) **सौचियौ री सही (देर से बात समझना) ।**
सोचियौ री सही जाने दं मेरे ।
(5) **डाकौ दे काछू (असंभव बात करना) ।**
दखं डाकौ दि केहरी शौड़क गाड़िओ, भाईया, डाकं दे कुक लाएओ ।
(6) **हौलू राजहौ हांडा खरोला (झगड़ा) बढ़ाना ।**
अंग्रजं पूचं, हिन्दुस्तानो रा हौलू रा जेहा हांडा खरोला ।
(7) **भूसौ रा भाव (सस्ता) म्हारं संव बिकी लागे औ भूसा भावौ ।**
(8) **आखियं फूलि-आंखों में बसना ।**
ठयोगो गाई बोली कनकू, सौरे बलसनो झूबि,
जातरी रौहि महासू री मौलं आखि दि न झूलि ।
(9) **जीबू जौलना (ईर्ष्या करना) ।**
हौला विन्दो एं हौका बिनुए चाहिरि रा न फेरा ।
तेरे औ जौलटं देखियो जीब जौलौ मेरा ।
(10) **कूजं रौ झूलडू (सुन्दर) ।**
देखने रि ति चन्द्रकली झूलडू जानि कूजे रो ।

बुझारतें

जब बर्फ गिर रही हो और खेत, जंगल और चोटियां बर्फ का श्वेत परिधान पहन रहे हों, शाम हो गई हो और सब लोग खाना खा चुके हों, बच्चे और बूढ़े इकट्ठे होकर जलती आग का ताप लेने के लिये इधर-उधर इकट्ठे हो गये, तब बुझंणी, बुझारतें या पहेलियों का तांता सा लग जाता है। एक बुझारत का उत्तर मिल जाये, तो अगली बुझारत आ जाती है । जब कोई उत्तर नहीं बन पड़ता, तब निरुत्तर बालक या स्त्री कह देती है **"तां हुआ चावला या गेहूं रा एक मूला"** पर बुझारत सुनाने वाला कहता है—**"एक कंही वो गूलें दं"**। आखिर सुनाने और सुनने वाले में समझौता हो जाता है और उत्तर सामने आ जाता है । बुझारतों की शृंखला इसी प्रकार चलती है ।

सर्दी के 4 महीनें, नवम्बर, दिसम्बर, जनवरी और फरवरी को छोड़ कर अन्य कोई महीना बुझारतों के लिये उपयुक्त नही समझा जाता । यदि कोई बुझारत सुनने या सुनाने के लिये कहे, तो बड़े-बूढ़े उत्तर देते हैं—नहीं शुणावी, धान पालो जाओ । अर्थात् "नहीं सुनाते, धान सूख जाता है।"

इन ग्रामीण क्षेत्रों में जहां मनोरंजन के आधुनिक साधन उपलब्ध नहीं, वहां लोक साहित्य की अनेक कड़ियों में बुझारतों का भी विशेष स्थान है । बच्चे और युवा, बड़े-बूढ़ों से पहेलियां बड़े चाव से सुनते हैं । महासुवी क्षेत्र में बुझारतों का आज भी बहुत प्रचलन है।

इन महासुई बुझारतों के विषय विविध होते हैं। ग्रामीण वातावरण में से शायद ही कोई विषय बुझारतों में न आया हो । घर के भीतर की सब वस्तुओं से लेकर क्षेत्र से बाहर भी जिस वस्तु का ज्ञान हो, वह बुझारतों का विषय बन जाती है । एक ही विषय पर अनेक बुझारतें भी विभिन्न शैलियों में मिल जाती हैं—

1: राजरि बेटकी, नारगा नांव
खोली लि मुडकू, भेड़ौ ली गांव। (धुंभ्र)

2. पेटी दो बाजगी, मुडौ दो गेठा,
चाल गी नेंगया खुम्बली बेठा । (हुक्का)

3. कालो हांडकू कालो ही भात,
सित हांडकूए घूटा घाट । (केथ)

4. तीरी आऊं, तीरी जाऊं,
डाग नहीं, मांछो खाऊं । (बन्दूक)

5. इसि इसि का डेऊवो । (छाया)

6. चीटौ कागज, कालो बेजो,
सावे राखी, जीभें हेजो। (चिट्ठी)

7. आगें बड़ेक, पाछे बड़ेक ।
आर छलाका पार छलाका,
मांछि नाली दा जमटू पाका । (मक्खन)

9. सौरगीं दौ छटा बुड्डा बापू,
जोई खिन्दा जोई आपू । (अखरोट)

10. गाड़ि तलवार-न मिलदी मोले,
न मिलदी ध्वार । (जीभ)

11. तक तक तेंन्तु-धरत पत्तेन्तु
चिन्न मुडौ-दस पंर चलेंन्तु (बैल और कृषक)

ऐसी ही असंख्य बुझारतें ग्राम्य-जीवन में लोक कथा, कहावतों और लोकगीतों के साथ लोकमानस का मनोरंजन करती रही हैं। इन बुझारतों में वर्ण्य विषय को छोटा सा बता कर उसका व्यापक प्रभाव दिखाया जाता है । इसके अतिरिक्त इन पहेलियों में व्यंग्य का पुट भी रहता है । ये पहेलियां मनोरंजन के साथ मस्तिष्क को खूब झकझोरती हैं । पहेलियों को शब्दों का जाल पहनाकर इतने विचित्र रूप से प्रस्तुत किया जाता है कि बडी देर तक कुछ समझ में नहीं आता । कई पहेलियां गद्य में होती हैं, परन्तु इनमें से अधिक तुकान्त ही होती हैं ।

सर्दी के दिनों में इन असंख्य बुझारतों की प्रतियोगिता में एक नया ही रस मिलता है और बड़ी रात तक अन्य बातों के अतिरिक्त बुझारतों की प्रतियोगिता भी चलती रहती है ।

—कुमार भवन, संजोली, शिमला-6 ।

क्योंथल जनपद की लोकोक्तियां

—उमा शर्मा

क्योंथल जनपद महासू अर्थात् आधुनिक शिमला ज़िला का एक प्राचीन जनपद है । इस क्षेत्र की लोकोक्तियों में नागरिक और ग्राम्य दोनों का प्रभाव है । उस का कारण यह है कि क्योंथल क्षेत्र की राजधानी शिमला से पूर्व में आठ मील है । इस लिये इस जनपद पर शिमला नगर के आधुनिक जीवन का प्रभाव सर्वाधिक रहा है ।

लोकोक्तियां लोकवर्ग के अनुभव का भाषा-सार होती हैं । हमने इस क्षेत्र की कुछ एक लोकोक्तियां दी हैं—

1. बूबो री बुध और जाति री पत ।	जैसे मां-बाप वैसे ही बच्चे। यदि किसी का लड़का या लड़की बुरा काम करे तो तो लोग मां-बाप से तुलना करने लगते हैं ।
2. ठगड़े रा बोलणा आंवले फिरे-फिरे याद आ।	बुजुर्गों द्वारा कही गई ठीक बात उसी तरह बाद में याद आती हैं, जिस तरह आंवले का स्वाद बाद में अच्छा लगता है ।
3. बशर्मी डाल जामा, मेरे आया छेई के कामे ।	जब किसी के समझाने का कोई असर न पड़े, तब यह लोकोक्ति प्रयुक्त होती है।
4. गुरु बिन गत नी, साहे बिन पत नी ।	गुरु के बिना ठीक रास्ता नहीं मिल सकता जिस प्रकार साहूकार के बिना (कठिन समय में) इज्जत को खतरा होता है।
5. लाखा का जो बिजलियां ।	ो निकम्मे मनुष्यों की तुलना करते हुए उन्हें एक ही श्रेणी में रखना ।
6. फील सिक्की रो, ठाडा पटिक्की रो, पहुंचो एकी ठेंय ।	जल्दबाज़ और धीरे काम करने वाले लगभग बराबर ही काम करने वाले होते हैं ।

7. घीम्रो रे तोलने घीमड और देणी थूको री रखो।	ऊपर से तो बड़े धनवान बनना, लेकिन काम के वक्त कंजूसी दिखाना ।
8. दुधाली री लातो भी सही हो ।	मतलब पर, काम वाले मनुष्य की डांट भी सुननी पड़ती है।
9. लातो मूले गंगा गई, शन्न केसी माची ।	बहुत ही सीधे-साधे आदमी के लिए यह प्रयोग किया जाता है। जब किसी के पैरों के नीचे से गंगा भी चली जाए और वह यह कहता है कि आवाज़ कहां से आई ।
10. भेड़ नाची तो मिगण भी साथी नाची ।	शरीफ इन्सान जब कुसंगति में बुरे काम करे।
11. थाड़े मुई शाशू शाऊणे भाए आशू।	किसी बात पर बहुत बाद में पश्चाताप करना।
12. गोली ने माणे बांदरे खूटी मूंड बोडे।	नकलची का हाल बन्दर जैसा होता है। लंगरे की देखा-देखी में बन्दर भी छलांगें मारने लगा तो उसकी टांग टूट गई ।
13. आपणा घर गन्दे भर, दूजे रे घरे थूकणे रा डर ।	अपने घर में कुछ भी किया जा सकता है लेकिन दूसरों के घर में नहीं।
14. पातली छा डाव न खा।	गरीब इन्सान पर यदि मुसीबतें ही आती रहें, उस समय यह कहा जाता है जिस प्रकार पतली लस्सी में पानी नहीं मिलाया जा सकता उसी प्रकार मुसीबतों से घिरा हुआ इन्सान और मुसीबतें नहीं झेल सकता।
15. जाणों कदोसत्ता जसरी पीठ जलो ।	जिसके ऊपर बीतती है उसी को पता चलता है। कोई और क्या जाने ।
16. डूमणी मूंए लाई टाबरो लई रो आई।	किसी छोटे इन्सान को मुंह लगाया कि दूसरे दिन वह परिवार लेकर आ गया।
17. ठूंडे री माछली ।	जब किसी कार्य करने में असमर्थ हो।
18. आपणी बाली रा पंशा।	स्वावलम्बी बनकर ही कार्य किया जा सकता है।
19. नदी रे शादे, बूट नी खोलूदे।	आने वाली मुसीबत की संभावनामात्र से हताश नहीं होना चाहिए।
20. रात बी होई और भार भी भारूआ।	एक तो बूढ़ा शरीर तथा उस पर और अधिक मुसीबतों का बोझ ।
21. घारा पांबो रा दिन ।	अस्त होता हुआ सूर्य (बूढ़े आदमी के लिए इसका प्रयोग होता है ।)

—द्वारा श्री बी० के वास,
डोगरा लाज, शिमला ।

सोलन क्षेत्र—

संस्मरण के गर्भ में : पहेलियां

—नरेन्द्र 'अरुण'

पहेलियों का साधारण अर्थ तद्युगीन बुझारतों से लिया जाता है। 'बूझो तो जानें' शीर्षक के अन्तर्गत भी पहेलियों का उपक्रम ही आता है। पहेलियां, बुझारत, बूझ हिमाचली पहाड़ी भाषा में बुझाणियां अथवा पोलणियां एक ही शब्द के पर्यायवाची नाम हैं जिन का प्रयोग समाज के भीतर बदलते हुए वातावरण एवं परिस्थितियों के साथ-साथ युग युगान्तरों से होता चला आया है। आप हिमाचल प्रदेश के किसी भी छोर में चले जाइए, आप को इन बुझारतों अथवा पोलणियों का स्वरूप किसी न किसी रूप में उपलब्ध हो ही जाएगा। वास्तव में पहेलियां अपना आदिकालीन अलग-थलग इतिहास रखती हैं। प्रायः हमें सहर्ष स्वीकार करना पड़ता है कि सतयुग हो अथवा द्वापर युग, त्रेता युग हो अथवा कलयुग, किन्तु इन पहेलियों की समयानुकूल अपनी-अपनी मान्यता जीवित ही रही है। भले ही हिन्दु संस्कृति हो अथवा मुस्लिम संस्कृति इन पहेलियों ने अपना प्रभाव अवश्य छोड़ा है। भले ही इन के जन्मदाता कोई अदृश्य लेखक अथवा वाचक ही रहे होंगे किन्तु युग युगान्तरों से चली आई दन्तकथाओं अथवा श्रुति ज्ञान के आधार पर पहेलियों की रूढ़ि–परम्परा में कोई भी अन्तर नहीं आया। वास्तव में युवा पीढ़ी वर्ग की पहेलियों का उद्भव एवं विकास स्वयं एक पहेली बन कर रह गया है, फिर भी हम पहेलियों की आदिकालीन परम्परा की अवहेलना तो किसी भी रूप में नहीं कर सकते। यह बात दूसरी है कि काल की चक्की में पिसती हुई इन पहेलियों के अवशेष आधुनिक युग में अधिकांशतः मिटते ही जा रहे हैं।

आधुनिक युग की युवा पीढ़ी धीरे-धीरे पहेलियों जैसी अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर को दिन प्रति दिन खोती जा रही है। आदिकालीन सांस्कृतिक परम्परा की रूढ़ियों को जीवितप्रायः रखने वाली एवं मान्यता ग्रहण करने वाली ये पहेलियां भविष्य के अन्तराल में कहीं डूबती सी जा रही हैं। हमारी ये अनबूझी पहेलियां जो मध्य-वर्गीय समाज के भीतर कभी मनोरंजन का सर्वव्यापी अंग समझी जाती थीं, आधुनिक युग के भौतिक मनोरञ्जन साधनों की चकाचौंध में लोप होती जा रही हैं और उन का अपना अस्तित्व मिटता सा जा रहा है। इन्हें सुरक्षित रखना हमारा सांझा दायित्व है।

पुरानी पीढ़ियों की सुनी सुनाई बातें तो हम यहां नहीं करेंगे अपितु आप को हम आप ही के जीवन के अढ़ाई तीन दशाब्दि पूर्व के घटित क्षणों में अवश्य ले जाना चाहेंगे। हमें ठीक याद है कि आज से लगभग पच्चीस तीस वर्ष पूर्व हम अपने गांव में, बाहिर वाले मन्दिर के भीतरी दलान में सूर्य रश्मियों के डूबते ही एकत्र हो जाया करते थे। छु छकाई, खेल से जब थक जाया करते या जी ऊब जाया करता तो तुरन्त पहेलियों का दौर शुरू होता। यही कोई दस बीस बच्चे बड़े साहस से भाग लेते। आज आप भी तनिक अपने मानस पटल पर यादों के चाक से कुछ लिखने का प्रयत्न कीजिए; आप को तुरन्त बीते हुए अमूल्य सुनहरी क्षण उन्हीं बुझारतों एवं पहेलियों के बीच ले जाएंगे जिन्हें आप ने कभी प्रतिस्पर्धा में कहा सुना होगा। तनिक उन बीते हुए क्षणों की याद तो कीजिए कितना अतुलित आनन्द आप को उपलब्ध होगा।

गर्मी की भीगी-भीगी रातों में गांव के मध्य पीपल वृक्ष के नीचे चबूतरे पर बैठ कर अथवा सर्दी की ठिठुरती रातों में रसोईघर के चूल्हे के या अंगीठी के इर्द-गिर्द बैठ कर पहेलियां सुनने का आनन्द हम

कैसे भुला सके हैं। बार-बार दादी मां से जिद्द करने पर पहेलियां बुझवाना अथवा हमजोलियों के बीच पहेलियों की दौड़ का अनुभव आज भी कितना सुखद लगता है। अंगीठी के पास गोलदायरे में बैठे हुए हमारा पहेलियों का कम्पीटीशन भी अजीब होता था। हारने वाले को कल्पित गांव का राज्य जीतने वाले के चरण कमलों में समर्पित करना पड़ता था तब कहीं जा कर जीतने वाला उस पहेली को स्वयं बूझता था। यहां पर उपरोक्त संदर्भ में एक उदाहरण प्रस्तुत है। 'पहेलियों' की बुझारत खूब गर्म है और आप के सामने मोहन ने पहेली डाली है—

"बार छलाका पार छलाका,
मंझा नालिए गिम्टू पाका ॥

सभी सुनने वाले अथवा भाग लेने वाले हमजोली अपने दिमाग पर पहेली बूझने के लिए जोर लगा रहे हैं। कोई सोचते-सोचते अपना सिर खुजला रहा है; तो कोई अपने दूसरे साथी को ठुमका मार रहा है। किन्तु पहेली किसी को भी नहीं आई। आखिर में समय समाप्त हो गया और सभी श्रोताओं ने हार मान कर पहेली डालने वाले को नाम में मिला शहर दे दिया। शिमला जैसी राजधानी के मिलने पर पहेली डालने वाला मोहन मन ही मन के भीतर प्रसन्न हो कर कहता है—

हारिगे पतारि गे,
शुकि लिडकी चाटिगे।
शिमले शहरे मेरा परिवार रसो बसो,
तुसारे मुंहुंआं दे गिदड़ा री फुंसठी फशो।

उपरोक्त लोकोक्ति के कहते ही मोहन ने बताया कि अमुक पहेली 'मक्खन' है। हां, यदि कभी कभार पहेली का कार्य स्पष्ट न हो तो तर्क वितर्क होना अथवा लड़ाई-झगड़ा होना स्वाभाविक बन सकता है।

ज्यों-ज्यों समय बीतता गया और प्रदेश प्रगति के पथ पर सवार हो कर उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ता रहा, त्यों-त्यों इन पहेलियों, बुझारतों, अथवा फोहुलणियों का उपक्रम टूटता हुआ सा दिखाई देने लगा। विकास के चरण में समय का अभाव हुआ और लोकप्रिय ये कहावतें हम से छिन सी गई। बीसवीं शताब्दि के भीतर मनो-रञ्जन के साधनों ने करवट बदली, नौटंकी करयाले, स्वांग, बरलाज आदि का स्थान ब्लाक-समितियों द्वारा दर्शाए जाने वाले चल-चित्रों ने ले लिया। फिर भला पहेलियों की बात हम क्या कहें? प्रगतिशील मनोरंजन के साधनों के आगे हमारी बुझारतों का क्षेत्र फीका ही पड़ गया। फिर भी हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि हिमाचल प्रदेश के उन पिछड़े हुए इलाकों में जहां यातायात के साधन दुर्लभ हैं तथा जहां पर बिजली नहीं पहुंच पाई है, उन ग्रामों में अब भी पहेलियों का खजाना सर्वप्रिय और सर्वाधिक है। आज भी उन पिछड़े हुए क्षेत्रों के परिवारों को हमारी पहेलियों जैसी अनुपम सम्पदा को सुरक्षित रखने का गौरव प्राप्त है। फलतः आधुनिक प्रगति से प्रभावित युवावर्ग, दादी, अम्मा अथवा नानी के पास बैठ कर बुझारतें सुनने की अपेक्षा कहीं अधिक चलचित्र, आधुनिक एकांकी, रेडियो अथवा टेलिविजन देखना या सुनना पसन्द करेगा। इन घिसी-पिटी प्राचीन बुझारतों को सुनने का समय ही अब किस के पास शेष है। इन बुझारतों को बूझना, समझना और इन की गहराइयों को मापना सर्वसाधारण युवावर्ग के वश की बात नहीं। फलतः यही मूल कारण है कि आज का युवा पाश्चात्य सभ्यता के रंग में लिपट कर अपनी गौरवमयी प्राचीनतम संस्कृति से बहुत दूर होता जा रहा है।

अब तो बात यहां तक आ पहुंची है कि यदि आज हम किसी युवक को पहेली सुनाने या बूझने के लिए

कह भी दें तो वह आनाकानी करने लगता है। फलतः उसे पहेलियों जैसे नाम की कोई चीज भी स्मरण नहीं। पहेलियों के बारे में आज के युवक को पूछना मूर्खता के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। भले ही आप भी अपने इष्ट मित्रों से एक बार पहेलियों के बारे में पूछ कर देख लीजिए आप को यही प्रत्युत्तर मिलेगा–एकाध पहेली याद तो थी किन्तु अब सब भूल चूक गई, या कोई और सुन्दर सा बहाना खोज निकालेंगे—

तनिक हमें भी अपनी चारपाई के नीचे झाड़ू लगाना है और यह भी देखना है कि हम कितने पानी में हैं। स्मृति-पटल के सागर में डुबकियां लगाने पर हमें भी कुछ पहेलियों की याद ताजा हो आई है जिन का उल्लेख करना हम यहां अपना परम कर्तव्य समझते हैं। तनिक आप भी निम्नलिखित पहेलियों को पढ़िए, सोचिए, समझिए और उत्तर खोज निकालिए।

मानस पट पटल उभरती हुई पहेलियां

(1) थालिया बिच्चे कटोरा बेटा बाप से भी गोरा।	थाली बीच कटोरा, बेटा बाप से भी गोरा।
(2) चिट्टी चादर चहूं कनारे, तिथे खेले दो बंजारे।	श्वेत श्वेत चादर चार किनारे, उसमें खेले दो बंजारे।
(3) चंद सूरजे री लगी लड़ाई, तुकती भैण छड़ाणे आई।	चांद सूरज की लगी लड़ाई, तुकती बहिन छुड़ाने आई।
(4) धारा पाएं ते आई रुई, तेरा सिर लईगी पचरुई।	धार पर से आई रुई तुम्हारा सिर ले गई पचरुई।
(5) धारां पांए ते आया स्वामी, आपी छोटा दाढ़ी लाम्बी।	धार पर से आया स्वामी, स्वयं छोटा, दाढ़ी लम्बी।
(6) सुइने री सलाई, चटक काम्धे लाई।	सोने की सिलाई, तुरन्त दीवार में लगाई।
(7) आलणिए नी मालणिए, मालेया सारा देश। आपु बैठी धारा पांए, पुत खेलो परदेश।	आलणिएं नी मालणिएं, माल लेया सारा देश, आप बैठी धार पर, पुत्र खेले परदेश।
(8) अगढ़ बगढ़ का बिन्ना, अग्ग जले न पाणी सिम्मा।	अगड़ बगड़ का बिछा, अग्न जले न पानी गिला।
(9) नालिए आंऊं, नालिए जांऊं डाग न मिलो, मच्छी खांऊ।	नाली से आउ नाली से जाऊं, डाग न मिले मछली खाऊं।
(10) बार छलाका पार छलाका, मंझ नालिए गिमटू पाका।	इधर छलाका उधर छलाका, बीच नाल में गिम्टू पाका।
(11) एक सुइने रा सरू, से भूइयां छटो हांऊ क्या करूं।	एक सोने का फूल, वह नीचे गिरे तो मैं क्या करूं।
(12) ओह गई ओह आई, ।	वह गई, वह आई।
(13) तूं चल हांऊ आया।	तू चल; मैं आया।

(14) काली थी कलूटी थी,
लाल पाणी पीओ थी ।

काली थी, कलूटी थी लाल पानी पीती थी ।

(15) इतनीक तितनी जीरे जीरे दन्द,
तिसा जो खाओ करि देओ झण्ड ।

इतनी जितनी जरा जरा दान्त, उसे जो खाए करे वह झण्ड ।

(16) हरि थी मन भरि थी,
नौ लाख मोती जड़ी थी ।
राजा जी के बाग में,
दुशाला ओढ़े खड़ी थी ।
आया था जट,
बाह्या था फट,

हरी थी मनभरी थी, नौ लाख मोती जड़ी थी ।
राजा जी के बाग में दुशाला ओढ़े खड़ी थी ।

आया था जट मारा था फट ।

(17) हांऊ आया था तेरिया तंई;
तैं हाथ मलेयाय मेरिया तंई ।
शूणेगा खसम मेरा,
तो नाक बाडोगा तेरा ।

मैं तेरे लिये आया, तूने हाथ मिलाया मेरे लिए, सुनेगा खसम मेरा तो नाक काटेगा तेरा ।

(18) एक सींगों गाए,
तेसारा हग्गेया खाओ तेरी माए ।

एक सींगी जो गाए उस का छाना हुआ खाए तेरी मां ।

(19) एक्की गांवे बंस बसूटा,
दुज्जे गावें कूआं ।
तिज्जे गांव आग्ग लगी,
चौथे गांव धूआं ।

एक शहर में बांस बसूटा, दूसरे शहर में कूआं, तीसरे शहर में आग लगी, चौथे शहर धूंआं ।

(20) इक जानवर ऐसा,
त्यां री फुंझटी पंशा ।

एक जानवर ऐसा, जिसकी दुम पर पैसा ।

(21) वार धाणू पार धाणू,
बिच नालिए खोतड़ खाणू ।

इधर धाणु, उधर धाणु, बीच नाली सुराख करूं ।

(22) ढ़ाको मूला ते आवन्दी,
पेट छवान्दी ।

ढाक के नीचे से आई, पेट फुलाई ।

(23) घहड़ी थाले बाकरी,
त्या रा पेट रहेया आफरी ।

ढाक नीचे बकरी, उसका पेट फूला हुआ ।

(29) माए कक्ख जी,
पुत डफ जा ।

मां कक्ख सी पुत डफ सा ।

(25) मोतिया रा थाल उल्टा कदि भी नी छूटदा,
धागे नि परोई राक्खेया,
तेबे बि नी टुटदा ।

मोती का थाल उल्टा कभी नहीं छुटता धागे से पिरोया नहीं तब भी नहीं टूटता ।

(26) बियां रा सिर बाढ़ी दितेया,
न मारया न खून कितेया ।

बीसों का सिर काट दिया, न मारा न खून किया ।

(27) छोटा मोटा दुर्गा दास,
कपड़े थामो सौ पचास ।

छोटा मोटा दुर्गा दास, कपड़े पहने सौ पचास ।

(28) बणे जम्मी, बणे जाई,
सिर गदायी के घरा खे आई ।

वन में पैदा, वन से आई, सिर गुंथा कर घर को आई ।

(29) लम्बी लम्बी हात्थ कचोड़ी,
देक्खी लोगो कितणी दौड़ी ।

लम्बी लम्बी हाथ कचौड़ी, देखो लोगो कितनी दौड़ी ?

(30) ओलणी पोलणी,
दरवाजे बिच्चे खोलणी ।

ओलनी पोलनी दरवाजे बीच खोलनी ।

(31) कुमदी बंहणा लग लग करो,
कुण ईशा जो त्यां पाएं मरो ।

कुमती बहिन अलग अलग करे, कौन ऐसा उस पर मरे ।

(32) सरक सरक खल्यान्दी जाओ,
बिछड़ जिऊ मिल्यांदी जाओ ।

सरक सरक खिलाती जाए, बिछड़े हृदय मिलाती जाए ।

(33) शीश बणा ते चोर नठया,
कानपु` पकडया गेया ।
हस्तनापुरे मुकद्दमा चलेया,
नखनपु मारया गेया ।

शीश बन से चोर भागा,
कानपुर में पकड़ा गया ।
हस्तिनापुर में मुकद्दमा चला,
नखनपुर में मारा गया ।

आला धागा आला सूत
जो दस्सो से जुलाहे रा पुत्त ।

कच्चा धागा कच्चा सूत,
जो दूसरा बताए, जुलाहे का पूत ।

उत्तर

(1) नारियल की गरी (2) चांद सूरज (3) ताले की चाबी (4) कन्घी (5) जौ (6) नाक का गंद (7) अखरोट (8) छाया (9) बन्दूक (10) मक्खन (11) हींरा (12) नजर (13) दरवाजा (14) तलवार (15) मिर्च (16) मक्की (17) ताला चाबी (18) छलनी (19) हुक्का (20) मोर (21) बन्दूक (22) फुल्का (23) चपाती (24) कद्दू (25) तारे (26) नाखून (27) प्याज (28) (28) मूंजी (घास) (29) चक्की (30) जूती (31) कैंची (32) सुई (33) जूं ।

—प्राध्यापक, राजकीय
महाविद्यालय, कुल्लू ।

सिरमौरी लोकोक्तियां

"नीरज"

1. सीख लई मांकड़ों कोहल पाया झाखड़ो ।
   (सीख न दीजै बानरा, घर जो बये का जाय) ।
2. लूण्डों खे लिखती रो चौरो खे ताले नी हों ।
   (बदमाश के लिये लिखत और चोर के लिये ताले की कोई मर्यादा नहीं होती) ।
3. बासी रोटी, शिरे करज, घोरे कंगली नार
   चौथे मोयले, कापड़े नरक नशाणी चार
   (बासी रोटी, सिर पर कर्ज, घर में कंजूस औरत और मैले कपड़े ये चार नरक की निशानी हैं।)
4. निखणा नाई कूकरों मूंडो ।
   (बेकार नाई कुछ नहीं तो कुत्ता ही मूंडने लगता है।)
5. मौं खाया मोहिये रो गूंजों भोरी जाभले।
   (शहद महिया ने खाया, मूछें लिपटीं सीधे-सादे आदमी की।)
6. अणु खेचो री करगाणू बासा।
   (एक गांव (नदि आर) में खेत और दूसरे गांव (नदी पार) में बास हो, तो खेती क्या हो ?)
7. होरवी रे शाठ रो बोरयों रे आठ।
   (आठ अक्लमन्द साठ बेवकूफों से अधिक शक्तिशाली होते हैं) ।
8. हाड़ी रो दाढ़ी घोणयाई सोजों ।
   (असाढ़ी फसल और दाढ़ी घनी हो तो सजती है।)
9. चइचो बरखो भांग रो कात्ती बरखो लांग ।
   (चैत्र बरसे तो भांग पैदा होती है और कार्तिक बरसे तो पत्ती—रोग लगता है।)
10. खेती खसमो सेती।
   (खेती वहां जहां मालिक भी साथ रहता है।)
11. बाटो री खेती रो डोमो री पछाण ।
   रांगड़ो री दोस्ती खैर नी जाण।
   (राह के साथ के खेत, डोम की पहचान, रांगड़ से दोस्ती, समझो खैर नहीं।)
12. दामो रा सूआ जामदा ई देखियो।
   (दूब का सूआ उगते ही पता चल जाता है) ।
13. बैयरो रा राज, रो कुकड़ी रा नाज, कुछ नी होंदा।

औरतों का राज्य और मक्की का अनाज दोनों टिकाऊ नहीं।

14. ढ़िलकदी जड़ों रो होसरी नार,
   कुई नी करना इनौरा तबार।
   हिलती जड़ों का वृक्ष और सदैव हंसती स्त्री– इन का विश्वास नहीं करना।
15. चलणानी सांझ, ब्याहणी नी बांझ,
   टपणा नी कूआ, खेलणा नी जूआ।
   सांझ पड़े चलना नहीं, बांझ से विवाह नहीं करना, कूआं खाई छलांग लगा कर पार नहीं करना और जूआ नहीं खेलना ।
16. पराई पीठी दे नगारे,
   सोभी लागे प्यारे।
   दूसरों की पीठ पर लदे नगारे सब को अच्छे लगते हैं।
17. बाहरो नाबुए नाबू भीतरी भांग ना बाबू।
   घर में नहीं दाने, अमां चली भुनाने।
18. शौले री लाठी रो, मोड़ुए री पीठ।
   बलवान की लाठी और मरियल की पीठ, न्याय की कैसी उम्मीद, सदा ऐसा ही होता आया है।

—सम्पादक,
हिमप्रस्थ, शिमला।

'लोकोक्तियां सामाजिक परम्पराओं के दर्पण हैं, इनमें संस्कृति की आत्मा निवास करती है।
—अज्ञात

लाहुल की लोकोक्तियां: प्रयोग एवं प्रसंग

—के० अंगरुप लाहुली

गारवादो की लोकोक्तियां:

सम-प-जङ-न स-दङ-नम-यङ-जङ ।
सम-प ङ न, स-दङ-नम-यङ-ङन ।

भावना भली तो, भू और भुवन भला ।
भावना बुरी तो, भू और भुवन बुरा ।

रङ-नोर-ल-सेर-न-म-खेद् ।
मी-नोर-ल-हम-पा-म-खेद ।

यथा—आप भला तो जग भला ।
आप बुरा तो जग बुरा ।

अपने धन-दौलत को (व्यय करने में) कृपणता नहीं करनी चाहिए अर्थात् बरतनी चाहिये । पराये धन को हड़पने की (कोशिश भी) नहीं करनी चाहिये ।

ख-ल-म-ने, सेम-ल-य—ने ।

मुंह में मंत्र, मन में षड़यन्त्र ।
यथा—मुंह में राम बगल में छुरी ।

दुन-गी-मे, गयब्-की-ञिमा ।
सामने की आग, पीठ की धूप ।

दूरस्थ प्रदेशों को परिजनों से पड़ोस के शत्रु ही अच्छे होते ह, क्योंकि मुसीबत के समय वही लोग काम में आते हैं । अग्नि की प्रकृति भले ही चण्ड हो परन्तु वह सर्वसुलभ होने के कारण आप के जीवन में ज्यादा उपादेय हो सकती है । धूप के सम्बन्ध म ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि धूप सदा अड़चनों से घिरी रहती है ।

ख-ल-खुर-पइ-रङ-नोर, गयब-ल-खुर-पई-मी-नोर ।
मुख में डाली चीज अपनी, पीठ पर उठाई चीज परायी ।

संसार की हर एक चीज इतनी अनियमितताओं से व्यापत रहती है कि कोई भी चीज आप अपनी या परायी कह कर निश्चित रूप से दो भागों में निरधारित नहीं कर सकते । मान लो कि आपने खाने के उद्देश्य से कोई

खाद्य मुख में डाल दिया हो तो वह किसी हद तक आप का अपना धन होता है परन्तु किसी कारणवश वह खाद्य पुनः उल्टी के रूप में बाहर निकल आये तथा उसे कुत्ता या बिल्ली चट कर जाये तो उस अवस्था में आप उस वस्तु का प्रकारान्तर से ही भोक्ता समझे जायेंगे, असली नहीं । इसी लिये तो यह लोकोक्तिकार बड़े संदिग्ध भाव से कहता है कि मुख की चीज अपनी पीठ की परायी, न जाने पीठ पर उठाई चीज को भोगने की भाग्यरेखा किस के माथे में अंकित है ।

गर-दुन-ख़ेर-मई-दुङ ।

दुष्ट लुहारों को कांटों से पीटना चाहिये ।
यथा कण्टकेनैव कण्टकम् । कांटे से कांटा निकल जाता है, या, लोहे से लोहा काटा जाता है ।

योन-दग्-थद्-न-रन-थग-बोद ।

स्वामी चाहे तो अपनी चक्की बन्द रखता है ।

संसार के सभी कार्य किसी की प्रेरणा अथवा निर्देश से चलते या अवरुद्ध होते हैं । हठी या दम्भी पुरुष अपने स्वभाव के अनुसार यदा कदा अपना काम ठप्प कर लेते हैं, या ठप्प करवाते हैं । वे चाहें तो पुनः प्रारम्भ करते हैं, अथवा नहीं भी करते हैं । इस तरह के सन्दर्भों के लिए उपर्युक्त लोकोक्ति व्यवहृत होती है ।

शिङ् चिग्-मे-मि-बर, मी-चिग-तम-मि-लब् ।

अकेली लकड़ी जल नहीं सकती, अकेला आदमी बात नहीं कर सकता ।

यथा—एक हाथ से ताली नहीं बजती ।

छ-छब्-मर-गिस्-कोङ् ।
जल का बदला घी से चुकाना ।

मांगना एक ऐसी चीज है जिस का मूल्यांकन ठीक प्रकार से नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह व्यक्ति आप की विपत्ति के समय काम में आया है । मान लो कि आप ने कभी किसी से एक लोटा पानी भी मंगनी के रूप में उधार लिया हो तो आप को उस पानी के बदले कृतज्ञता पूर्वक एक लोटा घी का देना चाहिये ।

के-वइ-चोद्-पा,-शी-बई-दुर-स ।

सहजात स्वभाव मरघट तक ।

स्वभाव चाहे अच्छा हो या बुरा, वह, आप की मृत्यु तक आप के साथ रहता है । स्वभाव को बदलना खाला जी का घर नहीं है ।

लोग-लम-खी-यङ-शेस् ।
वापसी राह कुत्ते भी जानते हैं ।

मनुष्य तो क्या कुत्ते-बिल्ली और दूसरे जानवर भी अपनी वापसी राह को भली भांति पहचानते हैं। यह कहावत प्रायः नव-बधु के रुष्ट होकर अपने पीहर चले जाने पर तथा लड़के के माता-पिता बधु को पुनः लाने के लिये किसी आदमी को भेजने की बातचीत करने लगते हैं तो अपनी पत्नी से कुपित पुत्र, अपने माता-पिता से कहने लगता है कि 'उसे बुलाने की क्या आवश्यकता पड़ती है। **वापिसी राह तो कुत्ते भी जानते हैं।'** तब कही जाती है।

दो-कम-मे-मि-बर।

शुष्क पत्थर जलते नहीं।

पत्थर कितना भी सूखा क्यों न हो उस की प्रकृति जलने की नहीं होती। अतः आप को व्यर्थ का परिश्रम नहीं करना चाहिये। क्या बालू से भी तेल निकाला जा सकता है।

स्खाग्-तोग्-तोपी, ग्वा-त्पुग-क्यरबु।

काग को टोपी, लोमड़ी को पाजामा।

कौवे के लिये न टोपी उपयोगी है और न लोमड़ी के लिये पाजामा। कौवे का काम हवा में उड़कर आर-पार जाना है। उसके सिर पर टोपी कभी नहीं टिक सकती। उसी तरह लोमड़ी की आदत जंगलों का खाक छानना है, पाजामा पहन कर वह दौड़-धूप नहीं कर सकती। अभिप्राय यह कि हर चीज अपनी जगह शोभा देती है।

चो-चो-तोग्-न-डफ-गम्।

क्षुधा से उत्पीड़ित होने पर रानी ? भी फाफड़ (काठू) का आटा फांकती है।

यथा (1) भूख में चने बादाम।

(2) बुभुक्षु किम् न करोति पापम्।

स्प्रिऊ-ल-खब् खिग्-ज़ोर-न-जिङ्-ल-चुग

वानर को सुई प्राप्त होने पर वह अपने वक्षस्थल पर चुभाता है। निर्धन मनुष्य को कभी थोड़ा बहुत धन प्राप्त होने पर वह उसे अनुपयुक्त स्थल पर व्यय करता है, अन्यथा अति शेखी बघारता है।

यथा –थोथा चना बाजे घना।

मुग्-पा-स-ल-बब्-न, छर-पा-री-ल-शोर।

कोहरा भू तल पर उतरे तो, बारिश पहाड़ को भागती है।

यथा– जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं।

म-मो-चिग्-गी-चिङ-न-तोङ-न, खल-पा-ग्याई-लम-छद्।

एक भेड़ के पेशाब करते समय पर सैकड़ों भेड़ों का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है।

आप ने कभी पहाड़ों के संकुचित रास्तों से भेड़ों की लम्बी कतारें गुज़रती देखी ही होंगी। ये कतारें कभी-कभी तो दो तीन किलोमीटर तक लम्बी होती हैं। इन के आगे पीछे और मध्य मेषपालों का दल होता है जो भेड़ों को पंक्तिबद्ध चलाने की व्यवस्था करता है। आगे वाला दल भेड़ों को राह दिखाता है तथा पीछे वाला दल भेड़ों को हांकने का कार्य सम्पन्न करता है। मध्य वाले दल का यह दायित्व होता है कि भेड़ों की चलती पंक्ति बीच से कभी टूटने न पाए। भेड़ भी अपने स्वामी का आदेश सिर माथे मान कर आगे बढ़ती चली जाती है। बीच में कभी कोई भेड़ पेशाब करने ठहर जाती है तो भेड़ों की पूरी पंक्ति को कुछ क्षणों के लिये हाल्ट करवा देती है। इस प्रकार मेषपालों की व्यवस्था में भी बिगाड़ आ जाता है।

यथा– एक मछली सारे तालाब को गंदा करती है।

फ-शद्-बु-मेद-न, बु-अलु-दङ-ड़ा।

पिता (की भांति) वक्तृत्व व(कला) पुत्र में न हो तो (वह) दोगला सदृश है। अर्थात् पिता का गुण पुत्र में न हो तो उसे विजन्मा अथवा जारपुत्र कहते हैं।

यथा– कुपुत्रेण कुलं नष्टम्।

सोद् नम् चन गी सम् पइ दोन् डुब।

पुण्यवानों की मनोकामना पूरी होती है।

यदि आप पुण्यवान अर्थात् भाग्यवान हैं तो आप की मनोकामना अवश्यमेव पूरी होगी। इसके विपरीत यदि आप को कभी किसी कार्य या व्यवसाय में असफलता मिलती है तो उस का दोष आप अपने भाग्य को न दीजिये। दोष आप में पुण्य की कमी का है। बोये पेड़ बबूल का आम कहां से खाये।

रङ लग् रि पो छे।

अपना हाथ रत्न वत।

यह लोकोक्ति बहुदा गृहिणियां प्रयोग में लाती हैं। जिस घर में सास-ससुर का दबदबा न हो वहां बहुएं अधिक नहीं रहतीं और वे निर्बाध रूप से घर में जो चाहे खा पी लेती हैं। उस प्रसंग में यह लोकोक्ति प्रयुक्त होती है।

अम् ची युल गी फरा मिन्।

वैद्य गांव का बकरा (सांड़) है।

यह कहावत जीवनदाता एक वैद्य के प्रति प्रयुक्त करना शोभनीय नहीं लगता, परन्तु इस का मन्तव्य वैद्य का अनादर करना नहीं, अपितु वैद्य के सेवाभाव का द्योतन है। जिस प्रकार सांड़ गांव की गली-गली निर्बाध गति से घूमता फिरता है, उसे रोकने-टोकने वाला कोई नहीं होता, ठीक उसी तरह वैद्य जब गांव के रोगियों को देखने के लिये निकलता है तो वह अपनी सुविधा के अनुसार आगे-पीछे के किसी भी घर में चला जाता है। उसका न तो समय निश्चित रहता है, न शुल्क। उन के सामने एक मात्र ध्येय रोगी के पास पहुंच कर उस की चिकित्सा एवं सेवा-सुश्रुषा करना होता है।

सो ती म रा खङ जे श रे।

पानी आने से पूर्व पाजामा ऐंठना। अर्थात् पानी के पहुंचने से पूर्व चोली अंगोछी समेट कर तैयार हो जाना। तात्पर्य बिल्कुल अनिश्चित बातों के लिये भी किसी का अत्यधिक आशावान होना।

खस् पा छल न चो थब् मेद्।

विज्ञजन त्रुटि कर जाय तो (वह) असाध्य होता है।

यद्यपि विद्वानों एवं चतुर पुरुषों से गलती होने की संभावना कम ही रहती है परन्तु जब कभी वे गलती कर जाते हैं तो वह असाध्य होती है। इसी से मिलती-जुलती तिब्बती में भी एक कहावत है। विद्वानों की त्रुटि एक व्याम (दोनों हाथों को दोनों) तरफ फैलाने की दूरी को व्याम कहते हैं, अन्यथा 6 फुट) और मूर्खों की त्रुटि एक बित्ता।

तोंग् पग् छोंस मेन दोन् मेद् येन।

शून्य में कूदना व्यर्थ है। अर्थात् जहां या जिस स्थान में आप के प्रत्यक्ष रूप से कोई विरोध करने वाला व्यक्ति न हो तो वहां पर अधिक डींग मारना व्यर्थ है। तीर वहीं मारा जाता है जहां लक्ष्य हो।

रङ खङ फेन खङ मी खङ चोन खङ।

स्वगृह पाद (अधोवायु) शाला, परगृह कारागार।

यहां पर अंग्रेजी कहावत जैसे 'पूर्व हो या पश्चिम 'स्वगृह सर्वोत्तम' वाली बात है, आदमी घर में जैसा चाहे स्वतन्त्रता पूर्वक विचार कर सकता है, परन्तु दूसरों के घर में वैसा नहीं कर सकता। इसीलिये तो किसी स्वाभिमानी संस्कृत विद्वान ने कहा है कि 'कष्टः खलु पराश्रयः'।

मी नोर ज स चग् की ढम्पा गोस्।

पराया धन खाने के लिये लोहे का जबड़ा चाहिये।

यह लोकोक्ति 'लोहे का चना चबाना' जैसी ही है। लोगों को अपनी धन सम्पति भोगने का हक सरकारी कानून में ही नहीं अपितु प्राकृतिक नियमों में भी निहित है। इस प्रकार आप अपने धन को तो किसी भी रूप में उपयोग कर सकते हैं परन्तु परायी चीज़ हड़पने के लिये आप को लोहे से निर्मित विशेष जबड़े की आवश्यकता पड़ेगी। प्रश्न यह है कि ऐसे जबड़े आप के मुंह में कैसे फिट हों। शायद उसे बिठाने के लिये आप के गले की दीवारों की भी काट-छांट करना पड़े या तराशना पड़े। जीते जी ऐसा करना संभव नहीं है। अत: अच्छा यही है कि आप पराया धन हड़पने की प्रवृत्ति ही त्याग दें।

फ इन बु स दिग्।

बाप का किया पाप, पुत्र पर फलित होता है।

यथा—खलः करोति दुर्वृत्तम्।
तद्धि फलति साधुषु॥

शेर. पा ल कोर जोग् तोङ गोस।

गट्ठे को घुमा फिरा कर तराशना चाहिये।

शहतीर हो या खिड़की दरवाजे के पल्ले जिस पर गट्ठ पड़े हों, तो उस स्थान को तराशते समय बड़ी सावधानी के साथ घुमा फिरा कर काम लेना चाहिये अन्यथा आप को नुकसान उठाना पड़ेगा। यानी प्रत्येक काम दत्तचित होकर करना चाहिए।

छन ल ङाल म शेस् न त यिन्,
ङ मो लङ म शेस् न ब यिन्।

(जो) रात को (समय पर) सोना नहीं जानता (वह) घोड़ा है। यानी उसे अश्व प्रकृत्ति का आदमी कहा जाता है। (जो) सुबह (समय पर) उठना नहीं जानता (वह) गौ है। यानी उसे गऊ के स्वभाव का आदमी कहा जाता है।

मी दोङ त ल मिग् योद् बयङ,
रङ दोङ त स में लोङ गोस्।

पराया मुख देखने के लिये तो (आप के पास अपनी) आंखें हैं, परन्तु अपना मुख देखने के लिये (आप को) दर्पण की आवश्यकता पड़ेगी। तात्पर्य यह कि आप किसी अनोखे या बदशक्ल को देखकर अनायास हंसने की कोशिश न कीजिये। हंसने और अट्टहास से पहले आप अपनी शक्ल नकल पर भी ज़रा गौर फरमा लीजियें, कहीं आप स्वयं उन से भी गये गुज़रे तो नहीं हैं।

ञिद् लोग् खन ल कल ब मेद्।

सोने वाले को हिस्सा नहीं।

कोई कमजोर व्यक्ति रात्रि-भोज के समय अन्य लोगों के साथ खाना पकाने में हाथ न बंटा कर पहले ही सो जाता है, तो उसे उस भोज का भागीदार नहीं समझा जाता। इसी से मिलती-जुलती बात राष्ट्रपिता गांधी जी ने भी कही है कि 'जो सोवत है सो खोवत हैं'।

छु थोन् थोन् ल मा खेन्।

जल से निस्तरण तक गुरु स्मरण। संकट से उबरने तक तो लोगों को देवी देवता और गुरूजनों का स्मरण हो जाता है, तत्पश्चात् विस्मरण।

यथा—दुख में सुमरिन सब करें।
सुख में करें न कोय।

फ्युग पोङ लग् तोग् वी छ सेर रे म बांगस।

धनी के हाथ से पसीना भी नहीं निकलता।

संसार में प्राय: यह देखने को मिलता है कि जो आदमी जितना धनाढय होगा, वह कृपण भी होगा

मानों ये दोनों एक दूसरे के पूरक हों अथवा पर्याय। बस, अन्तर इतना है कि धनवान की समाज में पूजा होती है और कंजूस की निन्दा।

ङा सद नस् खी ल जिन् ब।

मछली मार कर कुत्तों को दान।

मछली मार कर कुत्तों को दान करने से आप को पुण्य नहीं, बल्कि पाप ही मिलेगा। इस प्रकार आप स्वर्ग नहीं नरकगामी होंगे। पुण्यअर्जन करने के लिये पहले आप का सात्विक दृष्टिकोण होना चाहिये तत्पश्चात् दूसरी अवस्था सम्यक् क्रिया की आती है। इन के बिना सभी पुण्यार्थ क्रिया गाय को मार कर जूते का दान करने की सी हो जायेगी।

यग् शुस् नस् ङ म ल खद्।

याक की खाल निकाल कर पूंछ पर अटकना।

मान लो कि आप के मजदूरों ने आप की परियोजना के 99 वें प्रतिशत काम पूर्ण कर लिये हों। अब वे एक प्रतिशत शेष बचे हुए कार्य को पूरा करने के लिये टाल-मटोल कर रहे हों तो ऐसी अवस्था में उपरोक्त कहावत उन लोगों को समझने के लिये रामबाण का काम दे सकती है। किसी शायर ने भी कहा है—हाथी निकल गया, दुम से परहेज क्या?

रङ ज न ख छिग् मी ज न छिङ् छिग्।

अपने खाने पर मुंह जले, दूसरों के खाने पर मन जले।

ईर्ष्यालू मनोवृत्ति के लोगों का जलना ही कार्य होता है। दावतों और पार्टियों में दूसरों को अधिक खाते देख कर वे स्वयं भी अधिक खाने की कोशिश करने लगते हैं तो उस हड़बड़ाहट में वे अपने मुहं तो जलाते ही हैं, ज्यादा खाने की वजह से अपना पेट भी खराब कर लेते हैं।

मी- छेन ल मी् छङ, दो- छेन म दो छङ।

बड़े आदमी के लिये छोटे आदमी, बड़े पत्थर के लिये छोटे पत्थर।

समाज में हो या व्यक्तिगत, बड़े लोगों के लिये छोटे आदमी उतने ही उपयोगी होते हैं जितने बड़े भवनों की दीवार की चिनाई में छोटे पत्थरों का योग।

ची ल जङ दे ल खस्।

जिस में अभ्यास उस में दक्षता।

आप जिस कला का अभ्यास करेंगे उस में आप को अवश्य ही दक्षता मिलेगी। चाहे मूर्तिकला का अभ्यास हो अथवा राहजनी या गिरहकट का कार्य। अभ्यास से ही मोक्ष भी प्राप्त होता है।

यथा—काम, काम को सिखलाता है।

थग् पा छद् न खुरु यङ्।

रस्सी के टूटने पर बोझ हल्का होता है।

अधिकार के छिन जाने या पत्नी के घर से चले जाने पर किसी व्यक्ति के समाज के प्रति दायित्व एक प्रकार से समाप्त सा हो जाता है। ऐसी अवस्था में वह अपने आप को उन्मुक्त अनुभव करने लगता है। इस तरह की परिचर्चाओं में लोग कहा करते हैं कि पत्नी मुझे छोड़ कर चली गई। तो क्या हुआ। समझो कि रस्सी टूटी तो बोझ हल्का।

मिङ लग् तोग् केन ते खी तन मेन्।

पराय हाथ में सत्तू का पिण्ड बड़ा दीखता है।

दूसरों के हाथ म सत्तु का लोंदा बड़ा दिखाई पड़ना किसी जादू-टोना की करामत नहीं है प्रत्युत अपने मन की ही माया है। जिस प्रकार किसी विषयी पुरुष को नारी नाम से मन में रोमांच पैदा हो जाता है, उसी प्रकार द्वेष-चित्त से युक्त ईर्ष्यालु दूसरों को सदा सन्देहपूर्ण दृष्टि से देखता हैं। इसी लिये तो ऐसे व्यक्तियों को एक ही सांचे म गढ़ी हुई ईंटों में भी अन्तर नजर आता है।

लग् पा म छ्ग्स् न छद् पा योङ।

हाथ संभाल के न रखो तो दण्ड पाओगे।

मानव धर्म में सदाचार का स्थान सर्वोत्तम है। सदाचार या दुराचार की वजह से ही तो आदमी छोटे या बड़े होते हैं। अन्यथा साढ़े पांच फुट के आदमी सभी बराबर हैं। सदाचार अथवा चरित्रवान होने के लिये केवलमात्र हाथ ही नहीं अपितु पांचों इन्द्रियों को संयम रखना पड़ता है। नहीं तो उन के बदौलत कभी आप को दण्ड भी भोगना पड़ सकता है। जनसाधारण में चोरी करने को सभी प्रकार के अपराधों से निकृष्ट माना गया है। इसी लिये तो इस लोकोक्ति म विशेष कर हाथ को संभाल कर रखने के लिये आग्रह किया है।

पटनवादी की लोकोक्तियां

खई तिग छा रङी।

कुत्तों को नमक देना। अर्थात् व्यर्थ का काम करना।

ल्हवारो चिर केट्री।

लोहारों का बाड़ लगाना।

इसी से मिलती जुलती तिनन्वादी की भी एक कहावत है—**डोमबू-छामंग्-बाड्-केट्री**। अर्थात् अायस्कारों का पुल पर बार लगाना। ख्वाली दुनियां में बड़े बड़े कलाकार, शिल्पी, कवि, विद्वान, वैज्ञानिक तथा दिग्गज दार्शनिक भी पैदा हुये हैं। जिन्होंने तिल के ताड़ बनाने म कोई कसर नहीं छोड़ी है। इस दौड़ में लाहुल के लोहार

और होमबू (आयस्कार) वंश के लोग भी पीछे नहीं रहे । लोहारों ने अपने घरों के सामने कांटेदार तारों के बाड़ लगा दिये, ताकि उधर से गुजरने वाली भेड़-बकरियों की ऊन, उन तारों में फंसा करे । तार में फंसी ऊन को कात कर उस से शाल दुशाले तैयार किया करें, जिन्हें दिल्ली या बम्बई जैसे महानगरों में बेच कर एक अच्छी खासी रकम उगाया करें । उस रकम से राजसी ठाठ से शादी करना, मकान बनाना आदि आदि। लोहारों की योजना डोमबू समाज को भी पसन्द आई अतः उन्होंने भी पुल के छोरों पर कांटों के बाड़ लगा कर ख्याली पुलाव पकाना आरम्भ कर दिया ।

गर्फी मनेड़ सबा ढेरे ।

यथा—नाच न जाने आंगन टेढ़ा ।

ग्वाबी टोबुडू ।

लोमड़ी को टोपी ।

लोमड़ी को टोपी अर्थात् ताज । ताज को राजा ही धारण कर सकता है, साधारण व्यक्ति नहीं । अगर किसी को अपनी हैसियत से बड़ी ज़िम्मेदारी या योग्यता से बड़ा पद मिल जाता है तो उपर्युक्त कहावत चरितार्थ होती है ।

ती-म-तंग्-दा-बप्वा लेहची ।

जल को देखे बिना बप्वा पहनना । अर्थात सावधान हो जाना ।

बाढ़ के पानी को देख कर तो सभी लोग सचेत हो जाते हैं । परन्तु उपर्युक्त लोकोक्ति के अनुसार जल को देखे बिना ही सचेत हो जाने का मतलब अत्यधिक सावधान हो जाना है । पहाड़ों में बाढ़ की अपेक्षा बर्फ का प्रकोप अधिक भयंकर होता है । हिम-स्खलन के समय मानव तो क्या गांव के गांव उजड़ जाते हैं । लोकोक्ति का 'ती' अर्थात जल का तात्पर्य भी बर्फ से ही है । बर्फ बहुत ठण्डा होता है, यह किसी को बताने की आवश्यकता नहीं है । पहाड़ों में बर्फ कब गिरेगी, निश्चित रूप से कोई कुछ नहीं कह सकता । इस लिये अच्छा यही है कि आप समय से पूर्व बप्वा यानी ऊनी जूता पहन कर तैयार हो जाइये, ताकि आप सर्दी से पूर्ण सुरक्षित रह सकें।

साहूकारो खिटग् मिठे ।

साहूकारों का पाद (अधोवायु) मीठा होता है।

यथा—महाजनो येन गतः स पन्थाः।

यानी बड़ों की राह भली ।

रंगु दची बल तपी सन्जी।

घोड़ा गिर चुकने के पश्चात सीढ़ी की मुरम्मत ।

प्रत्येक कार्य योजनाबद्ध होना चाहिये । अन्यथा आप को जीवन की हर घड़ी में मुसीबत झेलनी पड़ेगी। मकान की नींव हो या सीढ़ी के पुश्ते, सभी पक्के होने चाहियें । कच्ची सीढ़ी की वजह से एक तो आप के घोड़े गिरते हैं, दूसरा उस के पश्चात् आप को सीढ़ी की मुरम्मत भी करनी पड़ती है। घोड़ा गिरा तो उस की टांग टूटी । टांग टूटने के बाद उसे किसी अश्ववैद्य या सलोतरी के पास ले जाना पड़ता है। वहां पर भी मुसीबत आप का पीछा नहीं छोड़ती । चिकित्सक को शुल्क देनी पड़ती है । कभी आप के पास शुल्क की रकम नहीं होती, तो सेठ-साहुकारों के पैर पकड़ने पड़ते हैं । इस प्रकार आप का गोरखधंधा कभी भी समाप्त नहीं होता । अतः आप जो भी कार्य आरम्भ करना चाहेंगे उसे पूर्ण योजनाबद्ध हो कर लेना चाहिये । नहीं तो आप को सदा पश्चाताप करना पड़ेगा । इस संदर्भ में किसी ने दो टूक बातें कही हैं—

बिना बिचारे जो करे,
सो पाछे पछताए ।

पठ ग्वशी काकलो फ्या ।

पत्थर का टुकड़ा गोह के माथे ।

आप बड़े शान—शौकत के साथ मकानों और कोठियों के निर्माणार्थ मजदूरों से पत्थर तुड़वाते हैं । मिट्टी खुदवाते हैं और भी कई प्रकार के काम करवाते हैं । आप ने शायद ही कभी इस ओर ध्यान दिया होगा कि मेरे इस कार्य से बिचारे गोहों अर्थात् छिपकलियों पर क्या बीतता होगा । आप के कार्य से उन के क्रीड़ास्थल, शिला, चट्टान तथा विवर आदि नष्टभ्रष्ट हो जाते हैं । पत्थर तुड़वाते समय शिला-खण्ड छिटक कर उन निरीह जानवरों के माथे फोड़ते हैं । तब भी उन को आप से कोई शिकायत नहीं रहती । यह क्या विडम्बना है कि मकान और कोठी तो हम अपनी सुख सुविधा के लिये बनायें, उसके लिये हर प्रकार का कष्ट झेलें वे अभागे गोहवृन्द !

काकलो सत्रुई ।

कल-कले कहते 16 दिन व्यतीत करना ।

बहानेबाजों के लिये कल और परसों की लड़ी तैयार करना कोई कठिन बात नहीं होती । वे तो अपनी आदत से मजबूर होते हैं । हफ्तों, महीनों और कभी कभी तो सालों इसी प्रकार टाल देना उनके लिए कोई नयी बात नहीं होती । वह तो रोज ही होती रहती है, परन्तु प्रतीक्षारत व्यक्तियों पर इस से क्या गुजरता होगा, वास्तव में यही बात सोचने की है ।

तिननवादी की लोकोक्तियां

इंगु आमारिंग डेमी आचो ला मकूट्री

अपनी मां को डाइन कोई नहीं कहता है ।

तथा—कोई अपनी लस्सी को खट्टी नहीं कहता ।

दामम् ख्येत् थाल तांगुती ग्रलींग कुलू ।

दुन्दुभी (जिसे) दूसरे (व्यक्ति ने) उठा रखा है (आप उसे) जितना (चाहें) बजायें ।

यह लोकोक्ति 'पराये पीठ नगारांग' का ही एक समान्तर रूप है। लाहुल की सभी बोलियों में इस का रूपान्तर उपलब्ध है । दूसरों के खर्च-खुराक पर आनन्द-मस्ती का जीवन व्यतीत करने वालों पर यह कहावत व्यवहृत होती है, जिन्हें मालिकों के रुपये पैसे अनावश्यक खर्च होते देख मन में टीस तक नहीं लगती ।

गोराट् रेमो बलेतूं पिपी ।

गोपाल की बारी सब के पास पहुंचती है ।

गांव के ग्वाले के खाने-पीने की बारी सब के यहां लगती है । अतः किसी को एक दो दिनों की छूट के लिये आगे पीछे का हीला बहाना नहीं करना चाहिये । आप के पास चाहे आटा दाल का संग्रह हो अथवा नहीं ।

मरंट्रीम बुद्दी मंगलवार गाइन्सी ।

न देने के बुद्धि मंगलवार है ।

विश्वासों की जगत में मंगलवार के दिन घर से किसी चीज का बाहर जाना अशुभ अमंगल समझा जाता है । इस प्रकार मंगलवार के दिन कोई भी चीज़ घर से बाहर नहीं भेजी जाती । यहां तक तो बात समझ में आती है परन्तु जब किसी को कोई चीज़ नहीं देनी होती है तो उस के लिये हर रोज मंगलवार लगता है ऐसी बुद्धि के लिये क्या किया जायें।

गरपी मयरीं सेत् सावा केड़ी ।

नाच न जानने (वालों को) मैदान टेढ़े होने (का बहाना होता है) ।

यथा—नाच न जाने आंगन टेढ़ा ।

कारु रेचांग जांग् थोरकेला तब थोरकेला इच्चे ।

गधे के कान में सोना डालें या राख डालें, बराबर ।

आज्ञा, आदेश, निर्देश तथा बातों का पालन करने वाले निम्न कोटि के व्यक्तियों पर यह कहावत लागू होती है—क्योंकि वे बड़ों की सदा अवज्ञा करते हैं । ये व्यक्ति हैं :—

1. माता-पिता की बातों पर ध्यान न देने वाले कुपुत्र ।
2. गुरूजनों की आज्ञा का पालन न करने वाले कुशील चेले ।
3. पति के निर्देशों की अवहेलना करने वाली कुलटा स्त्री।
4. स्वामी की आज्ञा के विरुद्ध काम करने वाले कुभृत्य ।

रेऊपाचि बट्टी तेल हेसाब मकेट्टी ।

रेऊपा लोग बट्टी (भर) तेल का हिसाब नहीं रखते ।

रेऊपा जनजाति के लोग लाहुल के पटनवादी पश्चिम में निवास करते हैं । इन में मित्रता एवं आत्मीयता का भाव इतना ठूंस-ठूंस कर भरा रहता है कि वे आपसी लेन-देन के समय एक बट्टी (32 छटांक

या दो सेर का एक तौल) तक तोल का कोई हिसाब नहीं रखते, यानी छूट दे देते हैं । उन का यह सम्यक् व्यवहार लाहुल वालों के जीवन में एक आदर्श बन कर लोकोक्ति के रूप में अमर हो गया है ।

सीर्गूरिंग केब जोरती सेत् ग्रपचींरिंग नासा मती ।

बन्दर को सुई प्राप्त हो भी जाये तो (उसे) चुभाने के लिये स्थान नहीं ।

मानवजाति का आदि पुरुष वानर रहा है, यह अभिमत नृतत्वशास्त्रियों का है । परन्तु आज हम वनों और जंगलों में जिस वानर जाति को देखते हैं वह मानव से अत्यन्त पिछड़ा जीव है । मानव जाति का आदि पुरुष कपि रहा था या नहीं, यहां हमें उस पचड़े में नहीं पड़ना है, तो भी वानरों में जो मानवीय मनोवृत्ति पाई जाती है, वह वास्तव में एक अद्भुत चीज है । पहाड़ी लोग चोगा (लबादा) पहनते हैं । उसके कालरों में सुई दानी के रूप में सुइयां चुभो रखते हैं । मानव की यह युक्ति जंगली पशु वानरों को भी बड़ी जंची । एक दिन उन्हें कहीं से सुइयों की एक बड़ी मुट्ठी प्राप्त हुई । सभी वानर बड़े प्रसन्न हुए । प्रत्येक ने एक एक सुई उठाई और उसे अपने अपने कालरों पर चुभाने की कोशिश की, परन्तु उन नंगे-फकीरों को यह जान कर बड़ी ग्लानि हुई कि उन के पास सुई रखने की भी जगह नहीं है ।

नांग होंगुतोंग फिसोंग सिगुसींग्

अन्दर से खोखला, बाहर से चटक-मटक ।

यह आज के समाज की तसवीर है, जो बाह्य आडम्बर पर अधिक विश्वास रखता है ।

कारारिंग आबा कुट्टी ।

गधे को बाप कहना ।

विवशता में या स्वार्थवश आप किसी को भी बाप या बापू जी भले ही कह लें, वास्तव में आप के असली बाप का दायित्व निभा नहीं सकते। लाचारी और स्वार्थपरायणता मानव को इतना चरित्रहीन बना लेती है कि इस से कभी तो मानव के अस्तित्व पर भी सन्देह होने लगता है ।

बेटीऊ कचांग् मपीतरे बापचा फची ।

नदी के निकट पहुंचने (से पूर्व) बापचा खोलना ।

दरिया के नजदीक पहुंचने तथा उसे पार करने के लिये सभी लोगों को बापचा (ऊनी जूता) उतारना ही पड़ता है । मगर दरिया के नजदीक पहुंचने से पहले बापचा खोलने का मतलब अपने आप को बड़ा होशियार समझना है ।

छतीऊ छा मलासकी ।

सूप के नमक (के बराबर भी जिस का) मूल्य न हो । अर्थात् इतना तुच्छ कि जिस का कोई मूल्य ही न हो यह लोकोक्तियां ऐसी ओच्छी बातें करने वाले व्यक्तियों के प्रति चरितार्थ होती हैं, जिन की बातों पर न तो किसी समाज में और न ही अपने घर में विश्वास किया जाता है ।

भूतू भामें लिमू कुलट्टी ।

भूतों से भी क्या अलगोजा बजता है ? नहीं बजता, यह संभव नहीं है । भूत और अलगोजे का योग नितान्त असंभव है । एक प्रत्यक्ष और दूसरा अप्रत्यक्ष यानी अभाव । अभाव से मूर्तरूप कभी सम्पन्न नहीं हो सकता, यह कटु सत्य है ।

—मध्य एशिया अध्ययन विभाग,
पंजाब विश्वविद्यालय,
चण्डीगढ़-14.

किन्नर कहावतें तथा लोकोक्तियां

—डा0 बंशी राम शर्मा

कहावतें तथा लोकोक्तियां भाषा का श्रृंगार होती हैं। सामाजिक अनुभवों तथा अमिट छाप वाली घटनाओं का जितना परिचय कहावतों से मिलता है, उतना किसी अन्य साधन से नहीं। ये मानव स्वभाव तथा सामाजिक आदान-प्रदान एवं व्यवहार का स्पष्ट दिग्दर्शन होती हैं। किन्नर क्षेत्र में भी अन्य क्षेत्रों की भांति जीवन-अनुभवों से सम्बन्धित विभिन्न लोकोक्तियां तथा मुहावरे प्रचलित हैं। यद्यपि कहावतें, मुहावरे तथा पहेलियां लोकोक्ति के अंग हैं परन्तु इन का अन्तर दर्शाते हुए डा0 कन्हैया लाल सहल अपने ग्रन्थ 'राजस्थानी कहावतें—एक अध्ययन' ग्रन्थ में ठीक ही लिखते हैं कि—लोकोक्ति मुहावरे की भांति निरा कार्य-व्यापार नहीं है, उसका रूप कुछ ऐसा होना चाहिए जो नीति परक हो और लोक-व्यवहार की कुछ मर्यादा बान्धता हो। लोकोक्ति साहित्य, यदि एक दृष्टि से देखा जाए तो नीति साहित्य ही है। मुहावरों में नीतिपरकता का प्रश्न उपस्थित नहीं होता, वहां प्रयोग की लाक्षणिकता तथा ध्वन्यात्मकता अनिवार्य रहनी चाहिये।'

किन्नर क्षेत्र में प्रचलित कुछ कहावतें तथा लोकोक्तियां वहां के लोकमानस को समझने में महत्त्वपूर्ण योगदान देती हैं, यथा—

1. **मे गुचू गुचू ग्यब,**
नार गुचू गुचू हार ।

अर्थात् यदि आग को बार बार छेड़ें तो बुझ जाती है तथा यदि स्त्री को बार बार तंग करें तो वह भाग जाती है। 'हारी' किन्नौर में पुनर्विवाह की प्रथा है अतः 'हार' शब्द से इस कहावत में 'स्त्री पुनर्विवाह कर लेती है' यह आशय परिलक्षित होता है।

2. **बतठिन तो ठी लानतोई, गर पिगरे दुग्यो।**
—सुन्दरी हुई तो क्या दांत? तो पीले हैं।

अर्थात् यदि दांत पीले हों तो सौन्दर्य शेष गुणों के होते हुए भी मन्द पड़ जाता है।

3. **उनचिद मीयू बोक दू।**
—मांगने वाले व्यक्ति का हलवा सदा ही गर्म होता है। अर्थात् वह बासी खाना क्यों खायेगा?

4. **मी छोत छु कसुम ता छोत गुन्फा सुम।**
—आदमी का पता तीन बातों से, घोड़े का पता तीन कदमों से। अर्थात् आदमी का पता थोड़ी ही बात से लग जाता है तथा घोड़े के सम्बन्ध में उसकी चाल से ही ज्ञान हो जाता है।

5. **सङ शा तङ तङ वाङ ी जोकोर।**
—गाय का मांस देख कर तुरन्त झपट पड़ना। गाय का मांस यद्यपि निषिद्ध वस्तु है परन्तु यदि मोटी गाय दिखाई दे जाये तो उसके मांस के लिये भी ललचा जाना अर्थात् समाजविरुद्ध कार्य के लिये भी संकोच न करना।

6. **अरक बोगना तेमरेल,**
चा बोगना कुनमस तोंग।
—शराब गिरना अच्छा शकुन,
चाय गिरना अपशकुन।

7. **फयाये टिखङसे कुई नीमा राक्शस सारयातो।**
—माथे पर टीके वाला कुत्ता राक्षस को बुलाता है, अर्थात् अशुभ दर्शन वाला व्यक्ति अपशकुन की सूचना देता है। इसी प्रकार—

8. **कू मानुव रो कचेलटङ्।**
—बुरे मनुष्य का बुरा लड़का।

9. **श्यालस ग्रनो श्रंगसी सैबां।**
—गीदड़ अपने डर से ही बोलने लग जाता है।

10. **निरथिङ् पामरासो खाकङ खेर।**
—मीरू के पमरस का मुंह (सदा ही) टेढ़ा।
यदि कोई व्यक्ति प्रसन्न होना जानता ही न हो तो उसकी मीरू गांव के पमरस के साथ तुलना दी जाती है, जिसका मुंह कभी भी सीधा नहीं होता था।

11. **फोचो राम राम।**
—गधे को 'राम राम' कहना। अर्थात अयोग्य व्यक्ति को आवश्यकता से अधिक सम्मान देना ताकि अपना हितसाधन हो सके।

12. **फोचो बेरगा शेल।**
—गधे को डण्डा ही दवाई। मूर्खों को समझाने मात्र से काम नहीं बनता, उन्हें तो डण्डे से ही हांकना पड़ता है।

13. **फो डाकाङ्, पाती ग्रोम्स।**
—हिरण डांक में, बंटवारा (मांस का) पहले। अर्थात् वस्तु की प्राप्ति से पूर्व ही उसके सम्बन्ध में बांट की बात करना।

14. **मनो हिसाब माइच सरसायू हिसाब।**
—मनों का हिसाब न रख कर सरसाई का हिसाब रखना।

इस क्षेत्र में मुहावरों की बहुलता ने स्थानीय भाषा को समृद्ध तथा लचकदार बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, यही कारण है कि इस क्षेत्र के निवासी हंसमुख तथा मजाक को पसन्द करने वाले हैं। यह उनका, जीवन की कठिनाइयों के होते हुए भी, सामाजिक गुण हो गया है।

—अनुसंधान अधिकारी,
हि0 कला-संस्कृति-भाषा
अकादमी, परिमहल, शिमला-9

हिमाचल के प्रसिद्ध हिन्दी कथाकार तथा स्वतन्त्रता सेनानी स्वर्गीय यशपाल का जन्मदिवस 3 दिसम्बर, 1977 को उनके मूल ग्राम भूंपल (ज़िला हमीरपुर) में मनाया रहा है। इस सम्बन्ध में दो रचनाएं इस अंक में सम्मिलित की जा रही हैं।

—सम्पादक

यशपाल–स्मृति कैसे स्थायी हो ?

—डा0 प्रभाकर माचवे

देश-विदेश में भ्रमण के साथ मैंने साहित्यकारों के स्मारक और विशिष्ट स्मृति-संग्रहालय भी देखे हैं। उनके आधार पर कुछ विचार यहां विचार-विनिमय के लिये प्रस्तुत हैं। स्थायी स्मारक सिर्फ ईंट-पत्थर का नहीं होता, पर जो 'यशःकाय' रूप में साहित्य प्रेरणा देता रहता है, वही सच्चा स्मृति रूप होता है। फिर भी प्रतीक रूप में जो होना चाहिये वह कुछ इस प्रकार से हो, जिससे हम क्रांतिकारी कथाकार को इस प्रदेश में, हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में और भारतीय साहित्य में, सही परिप्रेक्ष्य से देख सकें। कुछ सुझाव यों हैं:

दृश्य

जिस गांव में यशपाल जन्मे हों, उस मकान या स्थान को आधार बनाया जाये। यदि यातायात की कठिनाइयां हों तो निकटतम शहर में यशपाल-स्मृति की वस्तु बनें।

—इस में एक कक्ष में यशपाल के बचपन से अब तक प्राप्त छाया-चित्र रखे जायें। उन्हें बड़े आकार का बनाकर रखा जाये।

—जिन विचारकों ने, व्यक्तियों ने और संस्थाओं ने उन्हें प्रभावित किया, उनके छायाचित्र रखे जायें। उनके परिवार के सदस्य, मित्र और साहित्यिक सखा, बन्धुओं के चित्र रखे जायें।

—उनके हस्तलेख की प्रतियां—प्रमुख पांडुलिपियों के प्रथम पृष्ठ, महत्वपूर्ण पत्र, जो उन्होंने लिखे हों या उन्हें लिखे गये हों—उनकी 'फोटो-स्टैट' प्रतियां रखी जायें।

—वे चित्रकार भी थे। उनके दुर्लभ चित्रों की छायाकृतियां और मूल चित्र रखे जायें।

—उनके जीवन पर एक आलेख-फिल्म बनाई जाये।

पाठ्य

—दूसरे कक्ष में उनकी सब पुस्तकें, उनकी पुस्तकों के अनुवाद आदि रखे जायें। उन पर लिखे गये शोधग्रंथ और लेखादि का संग्रह हो। उन पर 'अभिनन्दन ग्रंथ' छपा, वह भी हो।

—'विप्लव' पत्रिका की फाइल फोटो-स्टैट कराके रखी जाये।

—प्रयत्न किया जाये कि उनकी समस्त रचनाओं की तिथि-क्रमानुसार एक प्रामाणिक अनुक्रमणिका या

सोमसी

सूची बने।

—उनकी आत्मकथा 'सिंहावलोकन' को आधार बनाकर, जिन जिन व्यक्तियों का उसमें उल्लेख है, उनकी 'टेप-रेकार्ड' के सहारे इंटरव्यू ली जायें और उन्हें टंकित करके रखा जाये।

—वे केवल कथाकार नहीं थे, परन्तु एक महत्वपूर्ण विचारक भी थे अतः उनके विचारों में कैसे कैसे परिवर्तन आये, जैसे भी विकास हुआ, सब एकत्र किया जाये।

श्रव्य

—यदि उनका स्वर आल इंडिया रेडियो, या विदेश के रेडियो के पास उपलब्ध हो, तो उनके रेकार्ड इकट्ठे किये जायें।

—उन पर ी हुई वार्तायें, उनके प्रति अर्पित श्रद्धांजलियों आदि के ेप रेकार्ड जमा कि जायें।

—उनके पारिवारिक सदस्यों और मित्रों से संस्मरण रेकार्ड कि जायें।

यह कुछ सामान्य बातें मैंने लिखी हैं, परन्तु यशपाल के क्रांतिकारी बहुमुखी व्यक्तित्व का सम्बन्ध तत्कालीन राष्ट्रीय जागरण, क्रांतिकारी आन्दोलन और साहित्यिक जन जागरण से है। अतः जनता तक उनके विचारों की प्रेरणा पहुंचाने के लिए यह उपाय करना चाहिए कि यशपाल के जन्म के समय के हिमाचल प्रदेश के आंचल के लोक-जीवन का चित्र उपस्थित हो। क्रांतिकारी आन्दोलनों का इतिहास संकलित और सुव्यवस्थित रूप से एक जगह इकट्ठा किया जाये। इस विषय पर उपलब्ध हिन्दी और भारतीय अन्य भाषाओं के साहित्य को सम्पर्करूप से एकत्रित किया जाये। मराठी, बंगाली, पंजाबी, तामिल, मलयालम तथा उर्दू में ऐसा काफी साहित्य है। वे सब पुस्तकें जमा की जायें।

प्रति वर्ष एक 'यशपाल व्याख्यानमाला' आयोजित हो जिसमें कोई प्रमुख साहित्यिक विचारक एक या दो लिखित भाषण इस स्थान पर प्रस्तुत करें, जिन्हें प्रकाशित करने की व्यवस्था की जाये। उस भाषणों के प्रकाशन से मिलने वाली आय इसी स्मारक में लगायी जाये।

ये सब विचार अनेक प्राथमिकताओं पर निर्भर हैं। पहली बात तो है कि यशपाल के परिवार के सदस्य कहां तक सहकार्य करते हैं। यानि उनकी इस स्मृति के हिमाचल प्रदेश में एकाकी रूप से बनाने में वे कितनी सामग्री देते हैं? क्या लखनऊ में (जो उत्तर प्रदेश की राजधानी भी है) उनके स्मारक की कोई योजना बन रही है? यदि हो, तो, उसके साथ इस योजना को समन्वित करना चाहिए। सब से प्रमुख बात इसमें लगायी जाने वाली पूंजी की है। किसी भी नये संग्रहालय का निर्माण शासन और जनता के द्वारा बड़ी राशि का विनियोग करने के संकल्प के बिना संभव नहीं।

फिर ऐसे कार्य के लिये स्थायी संस्था, भवन, कार्यालय और कार्यकर्ताओं की भी आवश्यकता होगी। इन सब पर विचार करके ही हम 'यशपाल-स्मृति' उसी रूप में पा सकेंगे जैसे रूस में टालस्टाय, गोर्की या दस्ताएवस्की के स्मृति संग्रहालय हैं, जर्मनी में, गोएटे या हेरमान हेस के हैं, या हालैंड में शैक्सपीयर, डिकेन्स या बर्नार्ड शा के संग्रहालय हैं। भारत में बंगाल में ऐसे स्थान हैं, जैसे रवीन्द्रनाथ, बंकिम चन्द्र और शरच्चन्द्र के स्मारक, तामिलनाडू में सुब्रह्मण्यम् भारती का स्मारक है, केरल में वल्लतोल का बना रहे हैं। दिल्ली में ग़ालिब का स्मृति भवन बहुत भव्य है, इकबाल स्मारक की योजना बन रही है। हिन्दी में 'निराला' और सुभद्राकुमारी चौहान की प्रतिमाएं केवल लगाई गईं। प्रेमचन्द स्मारक की बहुत बुरी दशा है, जो उनके ग्राम लमही में बना। इसलिए जो भी कदम उठाया जाय, वह सोच समझ कर और अपनी सामर्थ्य और सीमा को ध्यान में रख कर ही किया जाये।

शिमला-5

—उच्च अध्ययन संस्थान,
राष्ट्रपति भवन।

यशपाल की कहानियों में पहाड़ी जीवन-शैली की कुछ एक झलकियां

—देवकला

"फूलो का कुर्ता" कहानी संग्रह की भूमिका में सन् 1946 में यशपाल ने पहाड़ी जीवन शैली की एक लघु झांकी प्रस्तुत की है। वह लिखते हैं, मेरा गांव हिमालय के आंचल में है। उसे अभी रेल, मोटर, तार ने नहीं छुआ है। पहाड़ी भूमि अपना प्राकृतिक श्रृंगार लिए है। मनुष्य उस की उत्पादन शक्ति से सन्तुष्ट है। गाव छोटे-छोटे हैं, कहीं-कही बहुत ही छोटे। गरीबी है, अशिक्षा भी है परन्तु वैमनस्य और असन्तोष कम है। गांव में बंकू साह की दुकान है। दुकान में बरामदा है। वह बरामदा गांव की चौपाल या क्लब है। दुकान के सामने पीपल का पेड़ है। उस पेड़ के नीचे बच्चे भी खेलते हैं और ढोर जुगाली भी करते हैं। दुकान की छाजन में कुछ भले आदमी बैठे हैं, हुक्का चल रहा है। सामने गांव के बच्चे "कीड़ा कीड़ी" का खेल खेल रहे हैं। उन बच्चो में बंकू की पांच साल की बेटी फूलो भी है।

पाच बरस की फूलो ने क्या पहनना-ओढ़ना। बस कन्धे पर एक कुर्ता लटक रहा है। फूलो की सगाई हो चुकी है। कोई बहुत दूर के गाव में नही, बस एक फरलांग दूर, वह लड़का भी सात बरस का है नाम सन्तू है। सन्तू भी अपने ढोर चराता हुआ वहीं आ जाता है। उसे देख कर फूलो के साथ खेल रहे बच्चों में से एक बच्चा जोर से बोलता है, फूलो का लाड़ा (दूल्हा) आया। फूलो थी तो पांच बरस की, परन्तु उसने बड़ी स्त्रियों को लज्जा से घूंघट निकालते देखा था। उस में लज्जा का संस्कार पैदा हो चुका था। फूलो ने दोनों हाथों से कुर्ते के आंचल को उठाकर मूंह ढाप लिया। उसने सिर्फ एक ही कुरता पहना था। हुक्का पी रहे सामने बैठे भले आदमियों में से एक ने प्यार से धमका कर कहा "कुर्ता" नीचे कर।

इस घटना को देख कर यशपाल दार्शनिक के रूप में कहते है कि संस्कारमात्र से लज्जा और नैतिकता की रक्षा नहीं होती। एक तरफ को ढांपने की कोशिश में हम दूसरी तरफ से उघड़ जाते हैं। चेहरे से कुरते के आचल को नीचे खीचना अधिक अच्छा है।

एक दूसरी कहानी "उत्तराधिकार" में यशपाल पहाड़ी जीवन-शैली का चित्रण करते हुए लिखते है-पहाड़ के छोटे-छोटे खेतों पर एक आदमी मेहनत करे या दो, फसल की निकासी में कुछ फरक नहीं पड़ता। मर्द खेत जोत कर औरतों के हवाले कर देते हैं। गोरू और भेड़ बकरी की रखवाली बच्चे ही कर लेते हैं। विवाह छोटी उमर में ही जाते हैं। बहुनें जाने लगती हैं तो बहुएं आने लगती हैं। हर सिह का विवाह भी बालपन में हो गया था। जब उसकी घरवाली बारह बरस की हो गई तो ससुराल आने लगी और जब हरसिंह बीस वर्ष का हुआ तो फौज में भरती हो गया। । बरस में एक बार छुट्टी आता तो अपनी घरवाली "मानी" की भरती हुई जवानी को देखता। फिर वह फौजी सिपाही समुद्र पार लाम में चला गया। मानी की भरती जवानी सुडौल होकर फूट रही थी। खेतों में जानतोड़ मेहनत थी और घर में बूढ़ी सास और बूढ़ा ससुर। मेहनत मधुर कैसे बने। बूढ़ा बुढिया डाटते हैं, उनकी डाट बढ़ती ही जाती है। तंग आकर मानी को कहना ही पड़ गया– "तुम्हें भारी हो रही हूं तो कह दो, मेरे भी हाथ पांव चलते है, दुनियां बहुत पड़ी है"। मानी का घरवाला सरकारी

फौज का सिपाही था, इसलिए मानी के साथ हंसने खेलने के लिए तो कई तैयार थे परन्तु घर बिठाने की हिम्मत किसी मे नही थी। लाम से साढे चार साल बाद हरसिंह वापस आया। बाप मर चुका था। मां ने कहा–मैंने इस चुड़ैल को नथिया कर तो रखा था परन्तु कौन नहीं जानता बरसात की पहली आंधी में पेड़ गिरा ही करते हैं, अब इस लड़के को अपना ही समझ और ढंग से निभा। परन्तु फौजी हरसिंह का व्यवहार मानी से वैसा हो गया, जैसे जेलर का अपराधी से होता है। हरसिंह के सिर में खून चढ़ता था कि मेरी मानी ने मेरे साथ अन्याय क्यों किया। एक दिन दाच लेकर मानी और उसके बच्चे को काट कर मार डालना चाहा, परन्तु मानी बच्चे को छाती से लगा कर भाग गई। वह जुहम के घर बैठ गई, पंचायत ने हर सिंह की इज्जत का हरजाना एक सौ रु० जुहम से हर सिंह को दिला दिया। हर सिंह और उसकी बूढ़ी मां सोचा करते कि इतनी जमीन का वारिस अब कौन होगा। कुछ दिनों बाद वह हरजाना देकर एक कुशाली को अपने घर ले गया। हर सिंह को लाम में गोली लगी थी। कमर नाकारा हो गई थी। कुशाली की गोद हरी नहीं हो रही थी। वह अलमोड़ा में बालेश्वर देवता के दीप चढ़ाने गई ताकि उसके बच्चा हो। वह एक साल नहीं आई, हर सिंह के मन में पश्चाताप हुआ कि मैंने अपनी पत्नी मानी को भरी गोद क्यों घर से निकाल दिया। आखिर एक ब्राह्मण की सहायता से हर सिंह को कुशाली वापस मिली तब उसकी गोद में एक लड़का था।

एक अन्य कहानी 'जीत की हार' में यशपाल ने अलमोड़ा पहाड़ी क्षेत्र का चित्रण करते हुये लिखा है, अलमोड़ा के देहात में मुसलमानों की संख्या रुपये में पैसा भर भी नहीं है। जो है, प्राय: दर्जी, मिस्तरी, धुनखे और नगारची का काम करते हैं। ये कसम भी खाते हैं तो देवी देवता की, न बुर्का पर्दा, न कोई रिवाज का दूसरा भेद। कभी कभार कोई औरत धोती की जगह सुथना पहन ले तो पहचान हो जाती है। दर्जी बशीर की लड़की 'नाजू' उम्र को आ रही थी। रंग गोरा और आंखे बड़ी बड़ी। महुए की काली रोटी सिशोणा का साग और मोटा लाल चावल खाकर भी उसके शरीर पर दूध की चिकनाई छाये जा रही थी। बशीर, नाजू की मां और नाजू तीनों ही काम करते तो रोटी का निर्वाह चलता। बशीर कपड़े काट काट कर देता जाता, पीछे की कोठड़ी में बैठी मां और बेटी कच्चा कर देती या काज बटन लगाती रहती, बशीर मशीन चलाता रहता। इस के बाद इस कहानी में सन् 1947 के पहले की हिन्दू मुस्लिम फसाद की तह में छुपे भ्रष्टाचारी बिगड़े लड़कों के गुण्डेपन को प्रदर्शित किया गया है। तिलोक सिंह पंजाब से आए शरणार्थियों का हाई स्कूल का अठारह वर्ष का लड़का पहले इस 'नाजू' को छेड़ता है, फिर प्यार जताता है। विलम्ब दीखने पर मौका पर उसकी जान लेना चाहता है, फिर उसकी इज्जत उतारता है अपने सामने दूसरों से उतरवाता है अन्त में चाकू से उस पर मौत लेवा हमला करता है और उसे खत्म हो चुकी समझकर वहां से चला जाता है। इतना होने पर भी नाजू ने उसे क्षमा कर दिया और वह अदालत से बरी हो गया।

यशपाल ने यह बताना चाहा है कि नाजू औरत थी, वह हिन्दू नहीं थी, वह इस्लाम को भी नहीं जानती थी, उसने अहिंसा और उदारता के किताबी सबक नहीं पढ़े थे, उसे हिन्दू राज और इस्लामी राज का भेद मालूम नहीं था। वह औरत थी और प्यार करना जानती थी, उसे कौन हरा सकता था। कितना हार कर भी वह जीत गई, उसने तिलोक सिंह को माफ कर दिया, परन्तु तिलोक सिंह को तपेदिक हो गया। वह पापी पहाड़ की उस पवित्र कन्या की क्षमा सहार नहीं सका।

—गांव कवारा,
कसुम्पटी, शिमला–9

STUDIES IN THE SYSTEMATICS OF HIMACHALI LINGUISTICS

I. INTRODUCTORY:

In the journal सोमसी for January, 1977, a valuable article "शब्दश्री" contains Copious food for reflections, a few specimens of which may be given below:—

No. 1 आङ्ग "limb".

It is desirable to undertake something of a survey of the length of vowels in हिमाचली words as आङ्ग—here, for language has a shade of mathematics on fixed quantity of sounds specific for an area concerned.

No. 2. औडा "आवश्यकता"

This word awaits exploration but a tentative beginning may be attempted by quoting Turner आगत—parallel to sanskrit आपतितम् "has fallen upto us".

No. 3. ओरा

This may be a contamination phenomena in linguistics; two words involved, *viz.*, अवर and पर of Tuner no.— 805, parallel to अवर is Nepali ora— "In this side".

No. 4. छूबो

Here again, a contamination from the verbs, *viz*, क्षपयति and क्षुण्ण seems to have operated, the former Turner 3655 क्षपयति is, ruined of, Hindi Khapna, to be destroyed.

(*b*) Prakrit from क्षुण्ण *viz.*, खुण्ण leading to Kashmiri chonun "to be reduced in size".

No. 5. फेटी

Here only a single verb *viz.*, Sanskrit स्फिट may possibly have played some part, Turner 3838 स्फिटजि gets loose, oriya phirikiba, to fly away.

II. CONCLUSION:

The above data are Struggling data collected for the propose of discussion. for in the light of upto date linguistics, mere comparisons from only remotely connected languages, are worthless, unless those who are experts in हिमाचली also participate in these discussions.

—**Siddheshwar Varma.**

अकादमी की योजनाओं का परिचय

लेखकों को प्रोत्साहन

पुस्तक प्रकाशन योजना

राजनीतिक स्वतन्त्रता के पश्चात् भारतीय सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए साहित्य रचना को प्रोत्साहित करना राष्ट्रीय महत्व का कार्य है। भारत के प्रत्येक जनपद लेखक, साहित्यकार और कलाकार अपने-अपने सामर्थ्य के अनुसार इस में योगदान दे रहे हैं। उनके लिए उचित प्रोत्साहन अनिवार्य है। अकादमी की ओर से लेखकों के प्रोत्साहन के लिए तीन स्कीमें हैं—

(1) पुस्तक प्रकाशन;
(2) पुस्तक क्रय; और
(3) संगोष्ठियों का आयोजन।

यहां हम पहली स्कीम अर्थात् पुस्तक प्रकाशन का परिचय देते हैं—

(1) **पत्रिका प्रकाशन**—अकादमी की ओर से 'सोमसी' नामक त्रैमासिक पत्रिका हिन्दी माध्यम से जनवरी 1975 से प्रकाशित की जा रही है। इसके ग्यारह अंक छप चुके हैं। अक्तूबर 77, के बारहवें अंक के साथ इसके तीन वर्ष पूरे हो जाएंगे। प्रकाशित रचनाएं दो प्रकार के हित करती हैं—पाठकों के लिए कुछ ज्ञानसामग्री देती है और लेखकों के आभ्यन्तर की ज्ञान सामग्री को समन्वित और सन्तुलित करके उन्हें समाजोपयोगी व्यक्तित्व प्रदान करती हैं। ग्यारह अंकों के **लेखकों** को श्रमण्य के रूप में 7,105 रुपये की राशि भेंट की गई है।

(2) **पुस्तकें**—सितम्बर 1977 तक अकादमी की आठ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

(1) पहाड़ी लोक रामायण।
(2) छनाट-महाकवि भास के छः नाटक पहाड़ी में।
(3) ऋतम्भरा-संस्कृत कविताओं का संकलन।
(4) श्यामला-हिन्दी कविताओं का संकलन।
(5) माला रे मणके—पहाड़ी कविताओं का संकलन।
(6) कथासरवरी (दो भाग) पहाड़ी लोककथाएं।
(7) इन्दुकाव्यम्-सिरमौर-कांगड़ा की एक ऐतिहासिक गाथा संस्कृत काव्य में।

इन्दुकाव्यम् के रचयिता श्री परमानन्द शास्त्री हैं। शेष सात पुस्तकों में जिन साहित्यकारों की रचनाएं संकलित हैं उन्हें श्रामण्य के रूप में रु0 9237.75 पैसे की राशि भेंट की गई है।

(3) **पुस्तक प्रकाशनार्थ लेखकों को सहायता**—इस स्कीम के अन्तर्गत प्रत्याशी लेखक अपनी प्रस्तावित पुस्तकों की पाण्डुलिपियां अकादमी को भेजते हैं। अकादमी उचित समीक्षा—संवीक्षा के पश्चात उन्हें सहायता की रकम स्वीकृत और सूचित करती है। पुस्तक के छपने पर वह सहयता वास्तविक रूप में दी जाती है। सितम्बर 1977 तक 43 पुस्तकों के लिए 26,200 रुपये की सहायता स्वीकृत और सूचित की गई है। इन में सतरह, पुस्तकों के प्रकाशित होने पर रुपये 15,100 की रकम सम्बन्धित लेखकों को दी जा चुकी है।

पुस्तक समीक्षा

ग्रन्थ	—	इन्दुकाव्यम्
पृष्ठ	—	83
मूल्य	—	केवल पन्द्रह रुपये
ग्रन्थकार	—	परमानन्द शास्त्री
प्रकाशक	—	हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परीमहल, शिमला, 171009 ।

आजकल संस्कृत में विरचित नूतन महाकाव्य उसी प्रकार कभी-कभी देखने को मिलते हैं जिस प्रकार पावस में शशांक । श्री परमानन्द शास्त्री द्वारा प्रणीत इन्दुकाव्यम् चमत्कार की तरह समक्ष आता है, और आते ही शिष्टाचारानुसार सरस्वती-वन्दना से प्रारम्भ हो जाता है । आरम्भ में कथा-गति किञ्चित मन्थर है, परन्तु शीघ्र ही धारावत् तीव्र हो जाती है । इसकी कथा प्रायः ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है । इसमें उस समस्त चन्द्रवंश का आदि से अन्त तक वर्णन है जिसने बारहवीं शताब्दी से बीसवीं शताब्दी के मध्य तक सिरमौर-प्रदेश में एकछत्र राज्य किया । कथा यत्र तत्र प्रकृति-प्रभृति के मार्मिक वर्णनों से सुशोभित है, उदाहरणतः प्रथम सर्ग में हिमाद्रि की अपूर्व छटा तथा तृतीय सर्ग में रेणुका सरोवर का विशद तथा रस-स्रावक वर्णन पढ़ते ही बनता है । अनन्तर रथ-प्रयाण का वर्णन भी अति रोचक तथा रोमांचकारी है । इन कवित्वगर्भित वर्णनों के बावजूद कथा-निर्झरणी की गति अवरुद्ध नहीं होती । वास्तव में इन्दुकाव्यम् का रचयिता एक महान कथाकार है । वह जानता है कि कहां विस्तार चाहिए और कहां संक्षेप अपेक्षित है । देखिए, निम्नांकित श्लोक में कितना विस्तार कितने संक्षिप्त रूप में निबद्ध है :—

> सुरेश्वरैः स्तुतः स्तुत्यो जामदग्न्यः परन्तपः ।
> जगाम तपसे क्षिप्रं मघोनः दिशमुत्तमाम् ॥

कितनी क्षिप्रता है ! कितना वेग है ! यह कथा-वेग पांचवें सर्ग के सत्रहवें श्लोक से छप्पनवें श्लोक तक के काव्य-खण्ड में पराकाष्ठा पर पहुंचता है । इन चालीस श्लोकों में सिरमौर के राजवंश के कोई पांच सौ वर्ष का इतिहास कैप्सूल-रूप में उपवर्णित है । अहो समासः !

प्रस्तुत प्रबन्ध-काव्य का नाम किसी एक चरित्र पर आवृत न होकर एक वंश पर आधृत है (रघुवंश-महाकाव्यम् की तरह) । यह वंश है, सिरमौर जनपद का चन्द्रवंश । अतएव यह काव्य इन्दुकाव्यम् कहलाया है। यह महाकाव्य कुलमूलक है, चरित्रप्रधान नहीं। हमारा अभिप्राय यह नहीं कि इस ग्रन्थ में चरित्र चित्रण का अभाव है या कवि ने इस में काव्य गुण की उपेक्षा की है । नटनी तथा संसारचन्द्र–दुहिता अपने व्यक्तित्व की छाप सहृदय पाठक के हृदय पर सहज ही छोड़ जाती हैं । महाराज कर्मप्रकाश, विजय प्रकाश आदि का चित्रण अतीव सुन्दर है । निर्मम तथा अहंकारी भूपति धर्मप्रकाश एक धीरोदत्त नायक और कांगड़ा-नरेश संसार चन्द्र एक धीरोदात्त नायक के रूप में चित्रित हुए हैं । कालिका-भक्त विजय प्रकाश धीरप्रशान्त हैं तथा कर्मप्रकाश निर्बुद्धि एवं भीरु है जैसा कि उसकी भाभी के इस कथन से स्पष्ट है :

सोम सी

> भीरुर्देवरो नूनं नालं योद्धुमिहारिभिः

कवि का कला-कौशल तब एकदम प्रभावकारी रूप में आगे आता है जब हम पाते हैं कि पंचम सर्ग के उपरिनिर्दिष्ट चालीस श्लोकों में चित्रित नृपालों में भी चरित्रवभिन्नय है । कवि की तूलिका ने हर पात्र को सुन्दर, सलोना तथा अन्यों से भिन्न बताया है ।

शास्त्रीय दृष्टि से महाकाव्य सर्गबद्ध होता है । प्रस्तुत महाकाव्य में सोलह सर्ग हैं । सर्ग न अधिक लम्बे हैं, न अधिक छोटे । एक सर्ग की न्यूनतम श्लोक-संख्या अड़तीस है तथा अधिकतम श्लोक-संख्या एक सौ ग्यारह है । शास्त्रोक्त परिपाटी के अनुसार प्रायः पूरे सर्ग में एक ही छन्द है, अन्तिम श्लोक अथवा श्लोकों को छोड़कर। अन्यथा निबद्ध कविता इस नियम का अपवाद-स्वरूप है। वैसे ऐसा कविता-विधान भी शास्त्र-सम्मत है । इन्दु काव्यम् में ये छन्द प्रयुक्त हुए हैं—अनुष्टुप, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, उपजाति, द्रुतविलम्बितम् मालिन, शार्दूलविक्रीडितम् तथा शिखरिणी। आचार्यों द्वारा प्रतिष्ठित परम्परा का अनुसरण करते हुए कवि ने प्रत्येक सर्ग के अन्त में भावी सर्ग में वर्ण्य कथा का संकेत देने की मर्यादा को भी निबाहा है । इस प्रकार इन्दकाव्यम् में महाकाव्य के साहित्यदर्पण में निरूपित लक्षण पूर्णतया घटित होते हैं ।

इस महाकाव्य में विविध रसों का प्रसंगानुसार सुन्दर परिपाक हुआ है । करुणा की अजस्र धारा प्रस्तुत है:–

> क्षणेन भिन्नाचलसौहृदं त्वां शोचे परं किन्तु विचेष्टितं ते ।
> ब्रवीमि राजन् नाहि तत्वतोऽहं जानाहमद्याम्बुविहीनमीना ॥

यह रहा वीर रस का नमूना :–

> निर्भिद्य दन्तिनां कुम्भं वीराणामाशुगास्तदा ।
> भूतले पातयामासुः भूधरानिव वारणान् ॥

चौदहवें सर्ग में रानी के विलाप का वर्णन हृदयस्पर्शी है । उधर उद्दीपन विभाव का प्रभाव देखिए:–

> व्यपगतं मम मानसगौरवं
> पिककुलं च निरीक्ष्य पुनः पुनः ।

इस प्रकार अनायास रस-निष्पत्ति होती है । काव्य के उत्कर्ष को बढ़ाने में रसों में तथा छन्दों के साथ-साथ अलंकार भी पोषक सिद्ध हुए हैं । 'किमधुनामधुनावत मानसं' में यमक का विलास देखिए—'नितम्बगुर्वी गमनालसा सा प्रसाधिका स्कन्धधृताग्रहस्ता' में वृत्त्यनुप्रास का स्वाद लीजिए । 'रराज राजा रजनीशकान्तः' में कितनी श्रोत्र प्रियता है। नीचे देखिए:–

> यथा हि यस्य सलिले प्रशान्ते
> क्रीडन्ति पुत्रा इव मातुरंके ।

कितनी सुन्दर उपमा है ! एक बार फिर अनुप्रास की शोभा निहारिए:–

> वनिता नितान्त श्रान्तं स्वकान्तं रमयन्ति यत्र ।

इस प्रकार कविता-कामिनी अनुप्रास, उत्प्रेक्षा, उपमा, यमक, आदि अलंकारों से अलंकृत है, परन्तु यह उनके भार से लदी नहीं है।

कालिदासोत्तर कवियों की भांति प्रस्तुत महाकाव्य के रचयिता ने भी लिट् लकार का प्रचुर प्रयोग किया है। तथापि इस महाकाव्य की भाषा दुर्बोध नहीं है; यह सरस है, सरल है, सुबोध है। एकादश सर्ग में धर्मप्रकाश तथा उसकी रानी का संवाद अत्यन्त नाटकीय है। इस महाकाव्य का स्वर्णिम कलेवर अनेक सूक्ति मणियों से जटिल है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

1. श्रमयतीव मनो घटवत् खलु ।
2. कार्यार्थसिद्धौ विधिरेव हेतुः।
3. यस्यास्ति राज्यं किल तस्य धर्मः राज्यं न यस्य न तस्य धर्मः ।
4. यावन्न लोके ह्यरुणोदयः स्यात् तावच्च खद्योतकुलं विभाति ।
5. औष्ण्यं न वन्हिः प्रजहाति कामं भस्मावशेषत्वमियान्नयावत् ।

कभी-कभी हमारे काव्यकार के विचार अथवा भाषा पूर्ववर्ती काव्यस्रष्टाओं की याद दिला देते हैं। उदाहरणतः 'क्रोधं प्रभो संहर स्वहं त्वं' से कुमारसम्भवम् के 'क्रोधं प्रभो संहर संहरेति' और 'कार्पण्यदोषोपहतेन्द्रियस्य' से श्रीमद्भगवद्गीता के 'कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः' स्मृति-पटल पर उभर आते हैं।

इस ग्रन्थ में कहीं-कहीं मुद्रण-दोष खटकते हैं, परन्तु इन दोषों के बावजूद इन्दुकाव्यम् पठनीय है, प्रशंसनीय है। यह एक सफल महाकाव्य है। हो भी क्यों न ? परमानन्द शास्त्री की निरन्तर, दीर्घ काव्य-साधना का फल जो है यह! यह महाकाव्य इस तथ्य का एक और ज्वलन्त प्रमाण है कि भारत में देववाणी अभी भी जीवन्त है।

(कृष्ण चन्द्र शर्मा),
उपसचिव (वित्त),
हिमाचल सरकार, शिमला 171002।

सार-संक्षेप विचारावली

दिनांक 12 जुलाई, 1977 मंगलवार को अकादमी द्वारा संयोजित संगीत नाटिका "सुन्नी भूंकू" के उद्घाटन मंचन के अवसर पर अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री दौलत राम चौहान शिक्षा मन्त्री एवं अध्यक्ष अकादमी ने कहा कि श्रृंगार और प्रीत का जीवन में निर्विवाद महत्व अवश्य है परन्तु हमें देश भक्ति, वीर रस और समूची भारतीय संस्कृति क परिचायक नाटकों के संयोजन, मंचन और अभिनय की ओर भी ध्यान देना चाहिये।

दिनांक 15 अगस्त, 1977 को साहित्य कला निकेतन ठियोग द्वारा अकादमी के सहयोग से संयोजित साहित्य संगीत कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए शिक्षा मन्त्री महोदय (अध्यक्ष अकादमी) ने कहा कि स्वैच्छिक संस्थाओं को साहित्य और संस्कृति की सेवा और साधना में भारतेन्दु, हरिश्चन्द्र के त्याग और तपस्या को अपना आदर्श बनाना चाहिये। इस से उनके कार्यक्रम में स्तरीयता आएगी और फिर अकादमी द्वारा उनकी सहायता करना कर्त्तव्य बन जाता है।

दिनांक 28 अगस्त, 1977 श्रावण पूर्णिमा को संस्कृत दिवस के अवसर पर श्री शान्ता कुमार, मुख्य मन्त्री महोदय ने कहा कि संस्कृत और हिन्दी के साथ जुड़ना देश की माटी के साथ जुड़ना है। इसी अवसर पर श्री दौलत राम चौहान शिक्षा मन्त्री (अध्यक्ष अकादमी) ने कहा कि संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी इन चार भाषाओं के साहित्य में विषय निरन्तरता और छन्दनिखरता बराबर रही है। इस में विषयभेद और छन्द भेद नहीं हुआ। इस से भारतीय विचारधारा के प्रवाह में एकरूपता बनी रही और "सांस्कृतिक भारत" का अस्तित्व अभिव्यक्त रहा है।

दिनांक 21 अगस्त, 1977 को तुलसी जयन्ती के अवसर पर अकादमी द्वारा आयोजित एक साहित्य संगोष्ठी में भाषण देते हुए डा० प्रभाकर माचवे ने कहा कि रामायण एक प्रकार से 'कृषि संस्कृति' का महाकाव्य है, इसके इस पक्ष का उद्घाटन भली प्रकार होना चाहिये।

P&SHPS—1727 ACL/77-22-12-77—500.

हमें आदिवासियों के पास प्रेम और मित्रता की भावना से जाना चाहिये

"आदिवासियों में मुझे बहुत से ऐसे गुण मिले हैं, जो मैदानों, नगरों तथा भारत के अन्य भाग के निवासियों में नहीं मिलते। इन्हीं गुणों के कारण मैं उन की ओर आकर्षित हुआ हूं।

"भारत के आदिवासियों में बड़ी शक्ति है और वे स्वभावतः कभी-कभी सही रास्ते से भटक कर गलत रास्ते पर चलने लगे। उन्होंने आपस में लड़ाई झगड़ा किया। ऐसी घटनाएं बहुत ही निंदनीय हैं और इन्हें रोकना चाहिए, तो भी मुझे ऐसा अनुभव हुआ है कि उनकी कुछ आदतें उन आदतों से कम बुरी हैं, जो हमारे नगर-वासियों में पायी जाती हैं। मैं इन भोले-भाले लोगों के साथ प्रसन्नता का अनुभव करता हूं। इसका कारण संभवतः यह है कि मेरे अन्दर जो घुमक्कड़पन की आदत है, वह उनकी आदत से मिलती-जुलती है। मैं उनके पास एक साथी के रूप में पहुंचा, एक ऐसे व्यक्ति के रूप में नहीं, जो अपने को उनसे अलग-थलग करने या उनको देखने, उनका परीक्षण करने, उनको तोलने, उनको नापने-जोखने अथवा उनके बारे में रिपोर्ट देने या उन्हें एक दूसरे प्रकार का जीवन बिताने के लिए राजी या बाध्य करने के लिये उनके पास पहुंचा हो।

"स्वयं मुझे ही निश्चित रूप से नहीं मालूम कि रहन-सहन का कौन सा ढंग अधिक अच्छा है। कुछ मामलों में मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूं कि रहन-सहन का उनका ढंग अधिक अच्छा है।

"हमें आदिवासियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण रखना चाहिये। हम उन से बहुत कुछ सीख सकते हैं। उन से सीख कर हमें उनकी सहायता करनी है और उनको सहयोग देना चाहिये। वे लोग अत्यन्त अनुशासित होते हैं, कभी-कभी तो भारत के अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक लोकतन्त्री। यद्यपि उनका कोई संविधान नहीं है, फिर भी वे बहुत अधिक लोकतन्त्री ढंग से रहते और अपने से बड़े लोगों या प्रतिनिधियों के निर्णयों को व्यवहार में लाते हैं। खास बात तो यह है कि वे लोग नाचते-गाते और जीवन का आनन्द भोगने का प्रयास करते है। वे उन लोगों की तरह नहीं है जो स्टाक एक्सचेंजों में बैठ कर शोरगुल करते हैं और अपने को सभ्य मानते हैं।

"नगरों में रहने वाले हम लोग जीवन के सौन्दर्य से दूर जा चुके हैं। गांवों में जाने पर हमें अब भी बहुत सुन्दर लोकगीत और लोक नृत्य सुनने और देखने का अवसर मिलता है, उन पर आधुनिक सभ्यता का अभी तक कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। भारत में आधुनिक सभ्यता का जो विकास हुआ है, उसमें बहुत सी बातें अच्छी और बहुत सी बुरी। हम गाने और नृत्य की भावना को बिल्कुल खो चुके हैं और इस प्रकार जीवन का आनन्द भी, और यही चीज है जो आदिवासियों के आचरण और व्यवहार में पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है।

हमें आदिवासियों के पास प्रेम तथा मित्रता की भावना के साथ जाना और उन्हें स्वतन्त्र बनाने में सहायक होना चाहिये। हमारा यह कर्त्तव्य है कि जब हम उनके पास जायें तो वे यही महसूस करें कि हम उनको कुछ देने के लिए ही आते हैं, उनसे छीनने के लिये नहीं। भारत को इसी प्रकार के मनोवैज्ञानिक एकीकरण की आवश्यकता है।"

—जवाहर लाल नेहरू

H. A. A. C. L.

आर० एन० 28271/75.

1. निदशक, शिक्षा विभाग हि० प्र० द्वारा पत्राङ्क ई० डी० ऐन०-एच6 (8)-6(3) 1/75, 24 फरवरी, 1975 के अनुसार प्रदेश के समस्त कालजों पाठशाला व ज़िला पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत ।

2. निदेशक, पंचायत विभाग हि० प्र० द्वारा पत्र संख्या 7-3/66 पंच-3 दिनांक 21 जुलाई, 1977 के अनुसार प्रदेश के खण्ड विकास तथा पंचायत पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत ।

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा [illegible] मी, परीमहल, शिमला-9 द्वारा प्रसारित तथा उप-नियन्त्रक, मुद्रण तथा लेखन सामग्री [illegible], प्र०, शिमला-3 द्वारा मुद्रित